2 भारत-पाकिस्तान संबंध

युद्ध और शांति के बीच

राजेश एम० बसरूर

सन् 1947 में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही भारतीय इतिहास के अधिकांश हिस्से पर पकिस्तान के साथ उसकी लंबी शत्रुता की प्रधानता रही। इस चिरस्थायी प्रतिद्वंद्विता के दौरान युद्धों तथा संकटों की जो श्रृंखला प्रस्फुट हुई है, उनके कारणवश आशावादी संभावनाओं की गुंजाइश ना के बराबर हो गई है।[1] किन्तु आधे दशक तक निरंतर चलींचले समझौता वार्ताओं तथा मतैक्य की ओर छोटे लेकिन महत्त्वपूर्ण कदमों के सिलसिले के बाद भारत-पाकिस्तान संबंध अब नए स्तर पर जाने के संकेत दे रहे हैंरहा है। यह अध्याय भारत-पाकिस्तान संबंध के विकास का अनुरेखण प्रस्तुत करते हुए यह दिखाता है कि कैसे एक 'दुःसाध्य' प्रतिद्वंद्विता में मौलिक परिवर्तन आने शुरु हुए हैं। संक्षेप में, इस अध्याय का तर्क यह है कि प्रणालीगत स्तर पर परमाणु अस्त्रों के आगमन तथा वैश्वीकरण के दबावों, राष्ट्रसन्य के स्तर पर राष्ट्रीय पहचान तथा राजनीतिक व्यवस्था में प्रत्यक्ष बदलावों, तथा व्यक्तिगत स्तर पर नीति निर्माताओं द्वारा की गईकिस मस अभूतपूर्व पहलों ने भारत-पाकिस्तान संबंधों के प्रक्षेपपथ को बदलने में संयुक्त रूप से योगदान दियाकिया है। हालांकि सकारात्मक परिणामों का आश्ववासन अभी शायद ही दिया जा सकता है, यह प्रवृत्ति बेहतर समय की उम्मीदों को जगाने कि लिए बहुत ही उत्साहजनक है। फिर भी, यह देखा जाएगा, कि यह प्रक्रिया अपेक्षाकृत धीमी तथा वृद्धिशील रहने वाली है।

प्रणालीगत स्तर पर संरचना तथा प्रक्रिया

सर्वप्रथम, अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था के अंतर्गत संरचना तथा प्रक्रिया के बीच का अंतर समझना आवश्यक है। नव-यथार्थवाद के सरलीकृत विवरण के अनुसार संरचना का अर्थ अराजक व्यवस्था के भीतर शक्ति के ऐसे वितरण से है जहाँ देशसन्य एक दूसरे पर भरोसा नहीं करते।[2] प्रक्रिया का अर्थ है देशोंसन्यों के मध्य निरंतर होने वाली अनगिनत परस्पर क्रियाएँ। 'संरचना' व्यवहार के विस्तृत प्रतिमान उत्पन्न करती है। हितों तथा शक्ति के लिए संघर्ष करने की, गठबंधन करने की, हथियारों की होड़ में संलग्न होने की तथा कभी— कभी युद्ध लड़ने की देशोंसन्यों की प्रवृत्ति इन व्यवहारों के उदाहरण हैं।

'प्रक्रिया' अपनी जटिलता के कारण नव-यथार्थवादियों द्वारा तिरस्कृत है क्योंकि यह एक सुरुचिपूर्ण सिद्धांत की संभावना को नकारतीनक्कस्ता है। तथापि, यह कुछ महत्त्वपूर्ण व्यापक प्रतिमान उत्पन्न करतीकस्ता है। उदाहरणतया, जैसा कि नव-यथार्थवादी बताते हैं, वैश्विक अर्थव्यवस्था का परराष्ट्रीयकरण वर्तमान काल का एक प्रमुख लक्षण है। इसके कारण अंतर-राज्यीय संघर्ष अधिक महंगा हो गया है तथा इस कारण सहयोग की संभावना बढ़ने बड़ने लगी है।[3] साथ ही, प्रौद्योगिकीय बदलाव में तेजी की मतिवृद्धि के कारण कार्यक्षमता का अधिमूल्य बढ़ने लगा है तथा सहयोग का परिहार करना बहुत ही महंगा पड़ने लगा है। मिखाइल गोर्बाचेव यह समझ चुके थे और इसी कारण शीत युद्ध को समाप्त करने के लिए कार्यरत रहे ताकि सोवियत राज्य इस बदलाव के समय पीछे न रह जाए।[4] इसी प्रकार, परमाणु अस्त्रों के अगमन ने सामरिक अन्योन्याश्रय को जन्म दिया है तथा युद्ध कीके लागत को (संभावित लाभ के सापेक्ष में) अस्वीकार्य स्तर तक बढ़ा कर, निःशब्द रूप में ही सही, सहयोग को प्रेरित किया है।[5]

संरचना तथा प्रक्रिया के प्रभाव की बेहतर समझ हेतु प्रणालीगत स्तरों के बीच अंतर करना उपयोगी है। इसलिए, "अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था" पद का प्रयोग वैश्विक के साथ —साथ क्षेत्रीय स्तर के लिए किया गया है।[6] यदि संरचना की बात करें तो यह सरलता से

स्पष्ट है कि भारत तथा पाकिस्तान दोनों ही वैश्विक व्यवस्था में अपेक्षाकृत कमजोर देश सञ्य हैं। इसके विपरीत, क्षेत्रीय स्तर पर, जिसे दक्षिण-एशियाई अथवा उपमहाद्वीपीय व्यवस्था कह सकते हैं, भारत एक प्रमुख शक्ति है। हालांकि पाकिस्तान इस उपमहाद्वीपीय व्यवस्था में कोई तुच्छ प्रतियोगी नहीं है, वह सदा आकार, आबादी, आर्थिक शक्ति तथा सैन्य क्षमताओं के मामले में भारत से बहुत छोटा रहा है। बड़ी अथवा मजबूत शक्तियाँ छोटेछोटी अथवा कमजोर देशोंसञ्यों के साथ अलग व्यवहार करते हैं। जैसा माइकल मैन्डलबॉम दिखाते हैं, कमजोर देशसञ्य मजबूत देशों सञ्यों के समक्ष तभी झुकते हैं जब उनके पास कोई व्यवहारिक विकल्प नहीं बचता। अन्यथा, वे अनूठी रणनीतियाँ अपनाते रहते हैं।[7]

पहला, मजबूत देश सञ्य अपने से कमजोर देशों सञ्यों को राजनीतिक तथा आर्थिक संबंधों में वर्धन कर करीबी बढ़ाते हैं तथा अपनी शक्ति का अनुचित लाभ उठाते हैं। इसके विपरीत, कमजोर देशसञ्य 'परिखा-निर्माण/मोट बिल्डिंग' की रणनीति के द्वारा स्वयं को मजबूत देशोंसञ्यों से राजनीतिक तथा आर्थिक रूप से दूर रखने की कोशिश करते हैं ताकि वे अपनी भेद्यता को कम कर सकें। दूसरा, मजबूत देशसञ्य द्विपक्षीय अनुबंध को अधिक तरजीह देते हैं जिसके कारण वे लाभप्रद स्थिति में रहते हैं। दूसरी ओर, कमजोर देशसञ्य बहुपक्षीय तंत्र के पक्षधर रहते हैं ताकि उन्हें संविदा प्रक्रिया के दौरान दूसरों का समर्थन प्राप्त हो सके। तीसरा, मजबूत देशसञ्य कमजोर देशसञ्य पर अपनी शक्ति का बल लगाने का प्रयत्न करते हैं ताकि वे कमजोर देशसञ्य को अपनी इच्छा के आगे झुका सकें। इसके जवाब में कमजोर देशसञ्य अपने प्रयासों के माध्यम से अधिक से अधिक सैन्य शक्ति अर्जित करने में लग जाते हैं। इस प्रक्रिया को 'आंतरिक संतुलन' भी कहते हैं। साथ ही, दूसरे मजबूत देशों सञ्यों की सहायता से वे अपनी रक्षा की बेहतरी का प्रयत्न करते हैं जिसे 'बाह्य संतुलन' भी कहा जाता है। इसके परिणामस्वरूप, यदि कमजोर देशसञ्य सार्थक समर्थन प्राप्त करने में सफल होता है तो दो विरोधी देशों सञ्यों के बीच के संतुलन में बदलाव आता है। ऐसी स्थिति में मजबूत देशसञ्य का झुकाव भी संतुलन के प्रयासों के द्वारा अपनी स्थिति को बेहतर करने की ओर रहता है।

सन् 1947-71 के दौरान दक्षिण एशिया में व्यवहार के प्रतिमान मिश्रित रहे। एक तरफ भारत स्पष्ट रूप से बहुत बड़ा देशसञ्य था जिसके पास एक प्रमुख क्षेत्रीय शक्ति होने के सारे गुण थे। भारत के पास दक्षिण एशिया का 73 प्रतिशत भूमि क्षेत्रफल, 77 प्रतिशत आबादी, तथा सकल राष्ट्रीय उत्पाद (जीएनपी) का 77 प्रतिशत था।[8] फिर भी, स्वतंत्रता के बाद के पहले दो दशकों तक भारत की वास्तविक क्षमता सीमित रही, जबकि पाकिस्तानी सेना भारत के संदर्भ में अपने सापेक्षिक बल का अतिशयोक्तिपूर्ण धारणा रखतीधास्ना स्खता रही स्ह।[9] इस कारण पाकिस्तान ने 'अवास्तविक आशावाद' के साथ बल पूर्वक कश्मीर को पाने की उम्मीद में आशा के साथ दो बार युद्ध आरंभ किया।[10] पहला युद्ध 1947–48 में लड़ा गया जिसमें पाकिस्तानी आशावाद आंशिक रूप से उचित प्रतीत होता दिखा क्योंकिक्युंकि पाकिस्तान को लगभग एक-तिहाई कश्मीर पर नियंत्रण प्राप्त हुआ। संयुक्त राज्य अमेरिका के शीत युद्ध कीके गुटबंधन व्यवस्था में सदस्यता मिलने के कारण पाकिस्तान का आत्मविश्वास भी बढ़ गया था। पाकिस्तान सन् 1954 में दक्षिण-पूर्व एशियाई संधि संगठन (सीटो) का तथा सन् 1955 में केंद्रीय संधि संगठन (सेन्टो) का सदस्य बना। इन सदस्यताओं के फलस्वरूप पाकिस्तान अमेरिकी टैंकटैन्क और लड़ाकू विमान प्राप्त करने में भी सक्षम हुआ। बाह्य संतुलनसंस्तुल्म में पाकिस्तान की सफलता से यह प्रतीत हो रहा था कि उसे क्षणिक लाभ प्राप्त हुआ। चीन के साथ सन् 1962 युद्ध में भारत के बुरे प्रदर्शन के मद्देनज़र सन् 1965 में पाकिस्तान ने पुन: सैन्य जोखिम उठाने का साहस दिखाया, परंतु इस समय वह असफल रहा। युद्धोत्तर हुए ताशकंद समझौते (जनवरी 1966) ने सन् 1948 के कश्मीर विभाजन की पुष्टि की।

1970 के दशक के आरंभ में पाकिस्तान पकिस्तान-अमेरिका-चीन संबंध के उदय के साथ भारत कीके संरचनात्मक स्थिति में बेचैनी सी आ गई। परंतु इस बेचैनी का मुकाबला भारत ने सोवियत संघ के साथ अगस्त 1971 में 'मैत्री संधि' पर हस्ताक्षर कर के किया। भारत के आत्मविश्वास में वृद्धि हुई तथा पाकिस्तान कीकके आंतरिक कलह का लाभ उठाते हुए भारत ने सैन्य हस्तक्षेप किया। अत: सैन्य शक्ति का प्रयोग विपरीत दिशा में कारगर हुआ जब दिसंबरदिसम्बर 1971 में भारत ने इस तीसरे युद्ध का प्रयोग पाकिस्तान

के विभाजन तथा स्वतंत्र बांग्लादेश के सृजन के लिए किया।

यह एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन था। इसके उपरांत, 1980 के दशक के मध्य तक, भारत-पाकिस्तान संबंध मजबूत देश ~~सञ्य~~/कमजोर देश~~सञ्य~~ ढाँचे का पालन करते दिखे। क्षेत्रीय व्यवस्था की संरचना में भारत मजबूत देश~~सञ्य~~ तथा 'स्थानीय महाशक्ति' था (एक अतिशयोक्तिपूर्ण किन्तु निष्पक्ष राय के अनुसार) तथा पाकिस्तान एक कमजोर देश ~~सञ्य~~ था।[11] 1980 के दशक के मध्य तक भारत की सैन्य क्षमताएँ एक छोटे पाकिस्तान से बहुत ही अधिक थीं ~~थी~~। सन् 1985 में भारत का कुल सैन्य व्यय 8,921 मिलियन अमेरिकी डॉलर था। इसके मुकाबले पाकिस्तान ने 2,957 मिलियन अमेरिकी डॉलर का व्यय किया था।[12] सापेक्षिक दृष्टि से, पाकिस्तान ~~पकिस्तान~~ का व्यय इससे कहीं~~कई~~ अधिक रहा। इसी वर्ष भारत का सैन्य व्यय इसके सकल राष्ट्रीय उत्पाद का 3 प्रतिशत था जबकि पाकिस्तान के लिए सैन्य व्यय सकल राष्ट्रीय उत्पाद का 6.9 प्रतिशत रहा।[13] अपनी कमजोरी की भरपाई करने हेतु पाकिस्तान परमाणु अस्त्रों के अन्वेषण में सुदृढ़ रूप से जुट गया। परमाणु अस्त्र 'महान तुल्यकारक' का कार्य करते हैं जिसे 1980 के दशक के मध्य में पाकिस्तान~~पाकिस्तन~~ ने अंतत: प्राप्त कर ही लिया।

मजबूत देश~~सञ्य~~ की रणनीति का प्रयोग करते हुए भारत पाकिस्तान के साथ करीबी आर्थिक तथा सांस्कृतिक संबंध बनाने की चाह रखता रहा। तदनुसार, भारत पाकिस्तान के साथ उच्च स्तर के व्यापार का पक्षधर रहा, 1995 में पाकिस्तान को सर्वाधिक तरजीही राष्ट्र (एमएफएन) का दर्जा दिया, तथा पाकिस्तानी सांस्कृतिक हस्तियों का भारत में स्वागत किया। दूसरी ओर, पाकिस्तान भारत के साथ व्यापार के विरुद्ध रहा, जिसमें तेजी से गिरावट आई। सन् 1948-49 के मुकाबले 1950 के आरंभ में आयात 32 प्रतिशत से तथा निर्यात 56 प्रतिशत से गिर के 'रिसाव मात्र' ही रह गया था।[14] हालांकि आधिकारिक व्यापार अप्रत्यक्ष व्यापार तथा तस्करी के साथ जुड़ा हुआ था, उसे बहुत निम्न स्तर पर रखा गया था। 1990 के दशक के अंत की ओर पाकिस्तान द्वारा भारत को किया गया निर्यात उसके पूरे निर्यात का मात्र 0.42 प्रतिशत था। भारत से आयात भी पाकिस्तान के पूरे आयात का मात्र 1.22 प्रतिशत था।[15] इसके फलस्वरूप, पाकिस्तान को प्रभावित करने की भारत की क्षमता कम से कम रही। सांस्कृतिक संपर्कों ~~संसर्गों~~ का त्याग किया गया। पाकिस्तान में लोकप्रिय हिंदी चलचित्रों तथा संगीत को वहाँ के बाजारों में प्रवेश करने से रोका गया। जैसा कि पाकिस्तानी लेखक इरफान हुसैन टिप्पणी करते हैं, राजनीतिक नेतृत्व द्वारा 'पाकिस्तान के अस्तित्व को उचित सिद्ध करने की चाह में एक ऐसे देश की छवि प्रस्तुत की गई जो संस्कृति और इतिहास की विरासत से अलग था तथा दक्षिण एशिया के नक्शे से भली भांति कटा हुआ था।'[16] परंतु वास्तव में, पाकिस्तान की नीति सामान रूप एक कमजोर राष्ट्र द्वारा एक मजबूत राष्ट्र के साथ सम्बद्धता का विरोध किए ~~किया~~ जाने की सावधानी को भी दर्शा रही थी।

कश्मीर के मुद्दे पर भारत का द्विपक्षीय राजनय पाकिस्तान के बहुपक्षीय दृष्टिकोण के विपरीत था। सन् 1972 के शिमला समझौते को भारत द्विपक्षीय राजनय के लिए पारस्परिक प्रतिबद्धता का बिन्दु मानता रहा और इस पर जोर डालता रहा। इसी कारण, भारत कश्मीर मुद्दे का संभावित समाधान द्विपक्षीय वार्ता से करना चाहता था। दूसरी ओर, पाकिस्तान लगातार संयुक्त राष्ट्र संघ, इस्लामी सम्मेलन संगठन (ओआईसी), तथा अगल-अलग देशों ~~सञ्यों~~, मुख्यत: अमेरिका तथा चीन, से समर्थन प्राप्त करने का प्रयत्न करता रहा।

1980 के दशक के मध्य से दो प्रणालीगत प्रक्रियाओं ने दक्षिण एशिया के सामरिक समीकरण को प्रभावित किया। परमाणु अस्त्रों के आगमन से भारत-पाकिस्तान संबंधों में नाटकीय परिवर्तन आया तथा दोनों देशों के बीच के द्वेषभाव ~~द्वेशभाव~~ में भारी उछाल भी आया। इसकी उलटी दिशा में, धीमी गति से ही सही, वैश्विक आर्थिक परिवर्तन की गतिवृद्धि ने सहयोग के लिए प्रोत्साहन प्रस्तुत किए। परमाणु अस्त्रों के मुद्दे पर परमाणु प्रसार के गुण तथा दोषों पर चर्चा दिलचस्प और उपयोगी भी है। परंतु यह चर्चा इस बात की समझ प्रस्तुत नहीं करती ~~कस्ता~~ कि ~~पस्माप्णु प्रतिद्वंद्विता में~~ जब देश ~~सञ्य~~ परमाणु प्रतिद्वंद्विता में लिप्त हो जाते हैं तो कौन

सी क्रियाशील ~~क्रियाशिल~~ प्रक्रियाएँ काम करती हैं।[17] सभी परमाणु प्रतिद्वंद्विताओं का स्वरूप एक सा दिखता है।[18] आरंभ में तनाव का स्तर तेजी से बढ़ता है जिससे संकट की ओर बढ़ने की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है। बदले में परमाणु युद्ध के खतरे के कारण सजगता तथा सावधानी भी आती है तथा वार्ताएँ भी आरंभ होती हैं। तत्पश्चात प्रतिद्वंद्वी इस चक्र को दोहरा भी सकते हैं, अपितु ऐसा होना आवश्यक नहीं। अमेरिका तथा भूतपूर्व सोवियत संघ की भांति ही भारत तथा पाकिस्तान भी गंभीरतापूर्वक वार्ता आरंभ करने से पूर्व संकटकाल तथा वार्ता के एकांतर की श्रृंखला से गुजरे।[19] भारत-पाकिस्तान के बीच का तनाव बढ़ते पारस्परिक संदेहों तथा भय द्वारा गढ़ा गया था। पाकिस्तान द्वारा कम लागत के विकल्प अपनाने की नीति ने इन तनावों को अधिक विकट बना दिया। पाकिस्तान को जब यह ज्ञात हुआ कि भारत के पास युद्ध का विकल्प समाप्त हो गया है, तो उसके आत्मविश्वास में वृद्धि हुई और वह भारत, विशेष रूप से कश्मीर, में सक्रिय आतंकवादी समूहों का अधिक समर्थन करने लना।[20]

प्रथम संकट सन् 1990 में घटित हुआ। तब ~~जब~~ तक दोनों देश प्रच्छन्न रूप से ही परमाणु शक्ति थे। दोनों पक्षों ने, रक्षात्मक विन्यास में ही सही, सेना लामबंद करना आरंभ कर दिया ~~किया~~ किन्तु युद्ध टल गया। दोनों देशों द्वारा सन् 1998 की ग्रीष्म ऋतु में परमाणु परीक्षण के महज एक वर्ष के बाद ही सन् 1999 में दूसरा संकट पैदा ~~घटित~~ हुआ। इस बार पाकिस्तान ने ~~अपने कृत्यों की सीमाओं का विस्तार करते हुए~~ सैन्य दल को मुजाहिद्दीन के भेष में भेजा, जिन्हें कश्मीर में नियंत्रण रेखा (एलओसी) पर उन स्थानों पर कब्जा करने को कहा गया जिन्हें भारतीय सेना ने शीत ऋतु के दौरान खाली कर रखा था।[21] लड़ाई मई ~~के माह~~ से जून ~~के माह~~ तक चलती रही, परंतु दोनों देशों ने ~~बहुत बड़ी लामत पर~~ संयम ~~का प्रयोग किया~~ बरता। भारत ने नियंत्रण रेखा पार करने से परहेज किया ~~।~~ हालांकि इस फैसले ने भारत द्वारा हवाई हमले की क्षमता को सीमित कर भारत के प्रत्याक्रमण को धीमा कर दिया। हालांकि पाकिस्तान यह दावा कर रहा था कि वे घुसपैठिये स्वतंत्रता सेनानी थे, वह पीछे हटने के लिए मजबूर अपने सैनिकों का समर्थन करने भी नहीं आया। दोनों पक्षों ने यह ध्यान रखा कि तीव्रता में बढ़ोतरी ~~ना~~ न हो। दिसम्बर 2001 में एक तीसरा तथा दीर्घकालीन संकट तब आरंभ हुआ जब आतंकवादियों ने भारतीय संसद पर हमला किया तथा क्रुद्ध भारत ने सीमित युद्ध का भय दिखाया।[22] दोनों पक्षों ने सीमा पर पूर्ण रूप से लामबंदी की तथा प्रक्षेपास्त्र परीक्षण के माध्यम से परमाणु संकेतन का सहारा भी लिया। यह संकट धीरे धीरे समाप्त हो गया ~~गई~~ किन्तु अपने पीछे क्षय की भावना छोड़ गया ~~गई~~। एक और संकट सन् 2008 के अंत में घटित हुआ ~~हुई~~ जब पाकिस्तान के ~~स्थित~~ आतंकवादियों के एक छोटे से गुट ने मुंबई शहर में हिंसक हमला किया। इस हमले में ~~जिसमें~~ लघु शस्त्रों से करीब 170 लोगों की हत्या कर दी गई।[23] मई 2009 तक, हालांकि तनाव बरकरार था ~~बने हुए थे~~, स्थिति धीमी गति से सामान्य होने की ओर बढ़ रही है ~~रहे हैं~~। साथ ही, युद्ध की आशंका, जो पुन: एक समस्या के प्रकट हो रही थी, अब समाप्त सी हो रही है।[24]

समय—समय पर हुए ~~आवर्ति~~ टकरावों से दोनों देशों को कुछ लाभ मिले हैं। भारत ने विश्व का ध्यान पाकिस्तान द्वारा खतरा पैदा करने ~~जोखिम लेने~~ तथा आतंकवाद का ~~के~~ समर्थन करने की ओर आकृष्ट किया। दूसरी ओर, पाकिस्तान ने भारत को कश्मीर पर अपनी यथास्थिति के परे सोचने तथा वार्ता करने के लिए विवश किया। साथ ही, दोनों देशों ने अपनी रणनीति की सीमाओं को भी समझ लिया है। सरहद पार का ~~के~~ आतंकवाद तथा सीमित युद्ध की आशंका जोखिम से भरे थे तथा परमाणु युद्ध प्रारंभ करने का कारक बन सकते थे। इस दृष्टिकोण से, समझौता ही एक स्वीकार्य विकल्प प्रतीत हुआ। जनवरी 2004 में, भारत तथा पाकिस्तान ने आतंकवाद, परमाणु जोखिम कम करने, तथा कश्मीर जैसे विविध मुद्दों पर 'समग्र वार्ता' करने के लिए सहमति ~~सहमती~~ दिखाई। सबसे उल्लेखनीय बात यह रही कि वे कश्मीर पर अगल हट कर सोच रखने लगे। दोनों देश कश्मीर पर परस्पर अनन्य दावों को छोड़ नियंत्रण रेखा को नम्र करने, कश्मीर के बंटे हुए हिस्सों के बीच संचार का विस्तार करने, तथा व्यापार को बढ़ाने पर ध्यान केंद्रित करने लगे।[25]

जब हम प्रणालीगत प्रक्रियाओं के आर्थिक पहलू की ओर रुख करते हैं, हमें यह दिखता है कि व्यवस्था में होने वाले घटनाक्रमों का महत्त्वपूर्ण प्रभाव भारत तथा पाकिस्तान पर पड़ता है। व्यवस्था का एक प्रमुख लक्षण 'वैश्वीकरण' था (और है) जो 1980 के दशक के

मध्य से एक प्रमुख प्रक्रिया रही। डेनियल बेल के शब्दों में 'तीसरीतीसस प्रौद्योगिकीय क्रांति' वस्तुओं, सेवाओं तथा मुद्रा के आवागमन में चमत्कारिक चमत्कारीक बढ़ोतरी का कारण थीथा, जो इलेक्ट्रॉनिक्स, लघुरूपण, डिजीटलीकरणडिजिटिकरण्म तथा सॉफ्टवेयर विकास का मिश्रण था।[26] पराराष्ट्रीय उत्पादन तथा व्यापार और मुद्रा का तेजी से बढ़ता प्रवाह वैश्विक अर्थव्यवस्था का मुख्य लक्षण है। विश्व व्यापार का मूल्य 1960 में 244.1 बिलियन अमेरिकी डॉलर से बढ़ कर 1980 में 3,846.2 बिलियन अमेरिकी डॉलर हो गया।[27] विकासशील देशों की पुरानी तीसरी दुनिया-वाद (थर्ड वर्ल्ड-इज़्म) के राष्ट्रीय संरक्षण की नीति व्यवहार्य नहीं रही। आगे बढ़ने के लिए देशों सज्यों का अधिक खुलीखुले तथा प्रतिस्पर्धात्मक अर्थव्यवस्था की ओर परिवर्तित होना आवश्यक हो गया।[28] जैसा किकी इस पुस्तक के चौदहवें अध्याय में राहुल मुखर्जी दिखाते हैं, भारत ने उदारीकरण के चुनौतीपूर्ण नए संसार में अनिच्छापूर्वक प्रवेश किया। भुगतान संतुलन के संकट से उबरने के लिए भारत को अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) से सहायता की आवश्यकताआवश्यकता थी , जिसने भारत को उबारने के बदले आत्मनिर्भर अर्थतंत्र का त्याग करने के लिए अनिवार्य रूप से मजबूर किया। उसके बाद भारतीय अर्थव्यवस्था ने गतिवृद्धि कर तीव्रता से विकास कीके उच्च दर को हासिल किया। इस बदले वातावरण में, जहाँ विकास हेतु प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) प्राप्त करने पर ध्यान दिया जाने लगा, भारत-पाकिस्तानपाकिसतान के द्वेषभाव से उपजी अस्थिरता के आर्थिक नुकसान असहनीय प्रतीत होने लगे। 2001–02 संकट के दौरान इस प्रभाव की सार्वजनिक आलोचना हुई।[29] नेताओं को यह बतायाबताया जाने लगा कि सूचना प्रौद्योगिकी कीका तीव्र-चाल में विश्व क्षेत्रीय तनावों तथा युद्ध के खतरे से उत्पन्न होने वाली अनिश्चितता को सहन करने के लिए तैयार नहीं है था।[30]

जैसा कि हमने देखा, राजनीतिक तनावों ने भारत-पाकिस्तान व्यापार को निम्न स्तर पर सीमित रखा क्योंकिक्युंकि पाकिस्तान स्वयं को सुरक्षित करने के लिए भारत से दूरी बनाए रखना चाहता था। 2001-02 संकट के समापन के बाद ही दोनों देशों के बीच व्यापार बढ़ने लगा। परामणु हथियारों ने मुकाबले को ऋणात्मक-योग खेल बना दिया है - इस जागरुकता के साथ-_साथ यह भी अभिज्ञात हुआ कि बढ़ते व्यापार के माध्यम से बहुत कुछ प्राप्त किया जा सकता है। पाकिस्तान ने भारत को एमएफएन का दर्जा नहीं दिया है, वह व्यापार खोलने कीके शर्तों की संविदा-प्रक्रिया के दौरान भारत से गैर-शुल्क बाधाओं को कम करने की मांग करता रहा है।[31] वार्ता की प्रक्रिया के दौरान भारत-पाकिस्तान व्यापार 2004-05 में 521 मिलियन अमेरिकी डॉलर से बढ़कर 2007–08 में लगभग 2 बिलियन अमेरिकी डॉलर पर पहुँच गया।[32] सन् 2008 में कश्मीर के विभक्त भागों के बीच व्यापार आरंभ करने पर आर्थिक लाभ के साथ तनावों में भी कमी आई। प्रस्तावित ईरान-पाकिस्तान-भारत गैस परियोजना पर वार्ता रुक-रुक कर चलती रही, हालांकि ईरान की परमाणु महत्वाकांक्षाओं को लेकर अमेरिका और ईरान के बीच के तनावों ने इसे धीमा कर दिया।[33] इसके साथ भारत-पाकिस्तान के बीच सांस्कृतिक संबंध भी धीरे धीरे आरंभ हुए। पाकिस्तान ने चार दशकों से अधिक समय के बाद भारतीय चलचित्रों तथा सांस्कृतिक मंडलियों को देश में प्रवेश की अनुमति दी। जुलाई 2008 में पाकिस्तानी फिल्मचलचित्र रामचंद पाकिस्तानी ने दोनों देशों में एक साथ विमोचित हो इतिहास गढ़ा।[34] हालांकि नवम्बर 2008 के मुंबई आतंकी हमले ने संबंधों को तेज झटका दिया, 2008–09 का संकट पिछले तीन संकटों की तुलना में कम विकट रहा। एक प्रोत्साहक चिन्ह यह था कि उदासी के बावजूद व्यापार का बढ़ता परिमाण अपनी दिशा में ही रहा; पाकिस्तान में टमाटर का भारतीय निर्यात इस दौरान बढ़-ही गया।[35]

हालांकि शक्ति के प्रयोग की पारंपरिक समझ पर परमाणु अस्त्रों तथा आर्थिक अन्योन्याश्रय ने बाधाएँ लगा दी हैं, अन्य तरीकों से शक्ति अभी भी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। पहला, आर्थिक शक्ति राष्ट्रों को साम दाम दंड भेद द्वारा वार्ताकारों को प्रभावित करने हेतु सक्षम बनातीबनाता है। यहाँ, एक प्रमुख आर्थिक शक्ति के रूप में भारत का उदय ठीक उसी समय हुआ है जब पाकिस्तान की अर्थव्यवस्था आंतरिक राजनीतिक उथल-पुथल के कारण डूबने से बचने के लिए भी संघर्ष कर रही है। प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं के साथ दोनों देशों के संबंधों में यह बुनियादी अंतर स्पष्ट रूप से झलकता है। महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर कार्यावली-निर्माता के रूप में भारत का कद पर्याप्त रूप से बढ़ा है। उदाहरणतया, जुलाई 2008 में विश्व व्यापार संगठन (डब्लूटीओ) के दोहा दौर की वार्ता विफल रही क्योंकिक्युंकि भारत ने (चीन के साथ मिलकर) किसानों को दिए जाने वाले प्रशुल्क संरक्षण को हटाने के लिए अमेरिकी तथा

यूरोपीय~~युरोपीय~~ दबाव के सामने झुकने से इनकार~~इंकार~~ कर दिया।[36] इसी प्रकार, अगले माह भारत ने (पुन: चीन के साथ) विकसित राष्ट्रों के उन प्रयासों को सफलतापूर्वक अवरुद्ध किया जब घाना के अक्करा में विकसित राष्ट्र विकासशील राष्ट्रों पर ग्रीनहाउस गैस के उत्सर्जन~~उत्सर्जन~~ में कटौती थोपना चाहते थे ,जबकि भूमण्डलीय वृद्धि~~तापन~~ में विकासशील राष्ट्रों का प्रति व्यक्ति योगदान बहुत कम है।[37] भारत ने साफ तौर पर अभूतपूर्व संस्थागत और आर्थिक शक्ति का प्रदर्शन किया। इसके विपरीत, सन् 2008 के अंत के समय पाकिस्तान भयावह तंगहाली में था तथा ऋणदाताओं से विशाल नकदी प्रवाह की मांग कर रहा था। पाकिस्तान की अर्थव्यवस्था 15 बिलियन अमेरिकी डॉलर के वार्षिक पूँजी पलायन को रोकने के लिए संघर्ष कर रही थी।[38]

दूसरा, राजनीतिक शक्ति अभी भी मायने रखती है क्योंकि~~क्यूंकि~~ अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के संस्थागत ढांचे में अपनी राह बनाते देशों ~~सज्यों~~ की सफलता अथवा विफलता इसी से निर्धारित होती है। इस मोर्चे पर भारत ने एक वैश्विक कर्ता के रूप में एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि हासिल की जब सन् 2008 की~~के~~ शरद ऋतु में अमेरिका तथा परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह (एनएसजी) ने अपने प्रतिबंधक नियमों में बदलाव कर भारत के साथ असैन्य~~नागरिक~~ परमाणु व्यापार करने हेतु सहमति~~सहमती~~ दिखाई।[39] वॉशिंगटन द्वारा इस बात पर बल दिया गया कि यह एकमात्र अपवाद है तथा पाकिस्तान को ऐसा समझौता प्राप्त नहीं होगा। अमेरिका के इस पहल को पड़ोसी देशों ~~सज्यों~~ के 'विसमासीकरण' की नीति (डी-हाइफनेटिंग) कहा गया तथा मात्र भारत के साथ विशेष व्यवहार किया गया।[40] फलत:, नई व्यवस्था ने परमाणु अस्त्र युक्त शक्ति के रूप में भारत की अवस्था को स्वीकृति दी क्योंकि~~क्युँकि~~ इसमें भारतीय नागरिक तथा सैन्य कार्यक्रम को पृथक करने की योजना की अभिस्वीकृति अंतर्निहित थी। ~~भारत के~~ परमाणु ऊर्जा की आवश्यक्ता के मुद्दे पर भारत के चिंता के भाव के पीछे संरचनात्मक गणना थी: एनएसजी के मुख्य संघटकों की मदद से नई महाशक्ति बनने को तैयार बैठे चीन के विरुद्ध भारत तथा अमेरिका के हितों का सम्मिलन~~संमिलन~~ हुआ।[41] अर्थशास्त्र ने भी अपनी भूमिका निभाई - भारतीय परमाणु ऊर्जा बाजार विशाल था। अमेरिका के सहायक वाणिज्य सचिव डेविड बोहिजियन के आकलन के अनुसार यह बाजार एक दशक में लगभग 100 बिलियन अमेरिकी डॉलर का था।[42]

हालांकि परमाणु अस्त्रों की प्राप्ति के उपरांत पाकिस्तान को भारत के तुल्य सैन्य प्रतिष्ठा मिली, भारत की ~~के~~ बढ़ती~~ते~~ आर्थिक तथा राजनीतिक शक्ति के सम्मिश्रण ने दोनों देशों के बीच का अंतर बहुत बढ़ा दिया है। यह अंतर दोनों देशो में दीर्घकालिक सहयोग को प्रोत्साहित करता है (किन्तु आवश्यक नहीं बनाता है)। भारत के सामरिक क्षितिज का विस्तार उपमहाद्वीप के परे हो चुका है तथा एशिया में बड़ी भूमिका अदा करने हेतु सन्निकट परिप्रदेश में थोड़ी स्थिरता की आवश्यकता~~आवश्यक्ता~~ है। पाकिस्तान आंतरिक कठिनाईयों के कारण अभूतपूर्व रूप से कमजोर हो चुका है तथा ऐसी स्थिति में है जहाँ भारत को चुनौती देने की आर्थिक लागत तेजी से बढ़ रही है जबकि सहयोग के सैन्य तथा आर्थिक प्रलोभन एकसाथ~~एक ही समय पर~~ बढ़ रहे हैं।

अत:, प्रणालीगत स्तर पर, संबंध की प्रक्रिया में आए आधारभूत परिवर्तनों के कारण पुराने संरचनात्मक रूप से संचालित व्यवहार में बदलाव~~बदलाव~~ आया था। परमाणु अस्त्रों तथा आर्थिक पराराष्ट्रीयकरण के समक्रमिक प्रभाव ने निम्न कारकों द्वारा बदलाव की स्थिति उत्पन्न की: (i) पाकिस्तान पर हमले से सुरक्षा प्रदान कर उसके भेद्यता के भाव को घटाया; (ii) पर्याप्त जोखिम पैदा कर नेताओं को संबंध पर पुनर्विचार करने के लिए प्रोत्साहित किया; तथा (iii) सहयोग के लिए मजबूत प्रोत्साहन बनाए क्योंकि~~क्युंकि~~ परमाणु अस्त्रों ने स्थिरता में पारस्परिक हित को ला दिया~~लाया~~ तथा वैश्विक आर्थिक दबावों ने सहयोग द्वारा उच्चतर लाभ की संभावना बनाई।[43] परंतु ये~~यह~~ बदलाव पूर्व निर्धारित नहीं थे, बल्कि ऐसा~~यह~~ दोनों देशों के~~द्वारा~~ ऐसे निर्णयों के कारण हुआ था जिन निर्णयों को लेने की आवश्यकता~~आवश्यक्ता~~ नहीं थी। इस मुद्दे पर हम बाद में लौटेंगे।

राष्ट्रगत स्तर पर पहचान तथा राजनीति

राष्ट्रीय पहचान की विषम धारणाएँ भारत तथा पाकिस्तान के बीच के द्वेषभाव में गहराई से सन्निहित थीं~~थे~~। स्वाधीनता के क्षण अलग हुए इन देशों में बहुत ही अलग तरीकों के राष्ट्र-राज्य बनाने की चाह थी।[44] जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में भारत समावेशी पहचान बनाने का इच्छुक था। ऐसी पहचान के बल पर भारत के असाधारण रूप से विविध सामाजिक खण्डों- क्षैतिज (नृजातीय) तथा

ऊर्ध्वाधर (जाति/जनजाति/वर्ग) दोनों - को सामूहिक भविष्य की संरचना में अभिव्यक्ति का अवसर मिलता। पाकिस्तान, जिसे मोहम्मद अली जिन्ना के मुस्लिम भिन्नता के अभिकथन ने बनाया था, अनिश्चितता के कारण पाकिस्तान इस्लामिक पहचान के आधुनिकतावादी तथा धर्मनिरपेक्ष रूपों के बीच घूमने को प्रवृत हो रहा था। विभाजन की हिंसा, जो 'ऐसा बुरा सपना था जिससे यह उपमहाद्वीप अभी भी पूरी तरह नहीं उबर पाया', दोनों देशों कीके पारस्परिक धारणाओं में अभी तक विद्यमान है।[45] इसकाइसकी असरप्रभावशीलता कश्मीर के मुद्दे पर आम भारतीयों तथा पाकिस्तानियों के कटु विरोधी दृष्टिकोण में साफ झलकता है।[46]

कश्मीर एक अधूरी विदाई बिदाई का प्रतीक है तथा उसने पहचान कीके एक परस्पर अनन्य अवधारणा को अपनाया हुआ है। दोनों देश इसे अपनी छवि में उतारने का दावा करते हैं। कश्मीर की महत्ता को बढ़ाने में उन अपकेंद्री शक्तियों का भी योगदान रहा जिन्होंने समय—-समय पर दोनों देशों को तोड़ने का भय उत्पन्न किया। अपनी आंतरिक विविधताओं से अनभिज्ञ दोनों देश को यह भय है कि कश्मीर को हारने से राजनीतिक विघटन का आरंभ हो जायेगा। परन्तु, हालांकि भारत अपेक्षाकृत यथास्थितिवादी है, पाकिस्तान ने यथास्थिति को बदलने की पुरजोर कोशिश की है। भारत अपने हिस्से में मिले कश्मीर से संतुष्ट रहा है तथा स्थिति में बदलाव लाने के प्रयत्न भी नहीं कर रहा है क्योंकिक्यूंकि उसके पास कश्मीर घाटी के रूप में एक मुस्लिम बहुल इलाके का नियंत्रण है। इस कारण भारत को मुस्लिम समायोजक होने के अपने दावे को बनाए रखने की अनुमति मिलती है। इसके विपरीत, पाकिस्तान, जो हमेशा से भेद्य रहा तथा तथा सन् 1971 में बांग्लादेश के दूर हो जाने से और अधिक भेद्य हो गया है, कश्मीर के भौतिक अलगाव को बहुत नुकसानदेह मानता है। वह बल अथवा कूटनीति की मदद से बार— बार इस क्षेत्र को भारत से छीनने का प्रयत्न करता रहा है। इस प्रतीकात्मक रस्साकशी की तीव्रता का सबसे स्पष्ट चित्रण उत्तरी कश्मीर के सियाचिन हिमानी के बर्फिले बंजर के लिए होने वाले दीर्घकालिक सैन्य संघर्ष में हुआ है। सन् 1980 के दशक के आरंभ से होने वाली छिटपुट लड़ाइयों मेंसे बहुत अधिक क्षति सियाचिन के प्रतिकूल भूगोल ने ही पहुँचाई है।

पहचान का मुद्दा उतना सरल नहीं जितना प्रतीत होता है। मानववैज्ञानिक जानते हैं कि नृजातीय समूह केवल समान भौतिक तथा सांस्कृतिक विशेषता वाले व्यक्तियों के अनुभव से परिभाषित समूहोंसम्मूहन, अर्थात् 'एटिक', मात्र के रूप में नहीं बल्कि अधिक बेहतर रूप से 'एमिक', अर्थात् स्वयं को परिभाषित करने वाले होते है।[47] किसी व्यक्ति का किसी समूह के साथ बंधन बाह्य रूप से उस व्यक्ति कीके अन्य समूहों से भिन्नता तथा आंतरिक रूप से समूह के रहन में सहभागिता से उपजी संबद्धता की भावना से परिभाषित होता है। यह मानते हुए कि बड़े समूह लगभग सदैव ही विविध होते हैं, समूह के सामूहिक रहन में सहभागिता (कार्य) इसके साथ पहचान पाने के लिए (अनुभूति) आवश्यक है।[48] इसका अर्थ है कि राष्ट्र-राज्य के स्तर पर सामाजिक तथा राजनीतिक जीवन में (तथा फलत: इसके सकारात्मक योगदान में) एक आवाज़ होना राष्ट्रीय पहचान की गहन भावना हेतु एक आवश्यक शर्त है। यदि पहचान के बाह्य संघटक को इसके आंतरिक संघटक के साथ पर्याप्तपर्याप्त रूप से संतुलित नहीं किया जाए, तो पहचान सामूहिक बाह्य 'अन्य' के विरोध में ही सुदृढ़ होती है। भारत तथा पाकिस्तान के मामले में यह पूर्णत: स्पष्ट है।

सत्ता के बंटवारे के लिए होने वाले घरेलू संघर्षों के कारण कश्मीर का मुद्दा आरंभ से ही बिगड़ा हुआ था। इस कारण पहचान के आंतरिक संघटक कमजोर हो गए थे तथा पड़ोसी के प्रति द्वेषभाव ही राष्ट्रीय भाव का एक महत्त्वपूर्ण तत्व बन गया था। समय के साथ, भारत का अनुभव अपेक्षाकृत सकारात्मक होको गया। प्रधानमंत्री नेहरु के नेतृत्व में, हालांकि शक्ति का प्रयोग लोकतांत्रिक ढंग से हो रहा था, भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस - जिसने महात्मा गाँधी के नेतृत्व में स्वाधीनता आंदोलन की अगुआई की - के प्रभुत्व के कारण शक्ति केंद्रीकृत ही रही। तत्पश्चात, नेहरू की पुत्री इंदिरा गाँधी (जिनका उपरोक्त हमनाम से कोई संबंध नहीं) ने शक्ति के केंद्रीकरण के माध्यममाध्यम से काँग्रेस की दुर्बलता को पूर्वानुमानित रूप से रोकने का प्रयास किया। किंतु, आपातकाल शासन की अवधि (1975-77) के विपतन को छोड़कर, विकेंद्रीकरण की निष्ठुर प्रक्रिया शुरू हुई। नेहरू-इंदिरा गाँधी 'वंश' के सदस्यों को देश का प्रधान-मंत्री पद मिलता रहा है किन्तु इसके बावजूद देश में गठबंधन सरकार ही बीसवीं शतब्दी का नियम बन चुकी चुके हैं।[49]

आवर्तक धार्मिक, भाषाई, तथा जातीय संघर्षों से घिरे होने के बाद भी भारतीय राजतंत्र धीरे धीरे एक स्थायी लोकतंत्र के रूप में विकसित हुआ जहाँ राजनीतिक शक्ति वि◌केन्द्रीकृत थी तथा चुनाव के बाद सत्ता का आवधिक हस्तांतरण निर्विघ्न होता रहा। देशसञ्य ने अलगाववादी हिंसा के नियमित प्रकोप का उत्तर बल के साथ दिया, परंतु बातचीत की इच्छा भी रखी।

लोकतांत्रिक ढांचे ने विविधताओं पर स्पष्टीकरण तथा वार्ता के लिए बहुत ही स्थिर प्रक्रिया विकसित की।[50] भारतीय समाज के खंडित चरित्र ने यह सुनिश्चित किया किकी कोई अहम आधिपत्य संभव ना हो। भारतीय जनता पार्टी सन् 1988 से 2004 तक सत्ता में रही। भाजपा के नेतृत्व में हिन्दू दक्षिणपंथ ने, कम सफलता के साथ ही सही, हिंदुत्व (अथवा हिंदूवाद) को वैकल्पिक समेकक लोकाचार के रूप में प्रस्तुत करने की इच्छा रखी।[51] भारतीय लोकतांत्रिक ढ़ाँचे में सबसे शक्तिशाली समूह को भी सत्ता प्राप्ति के लिए गठबंधन का सहारा लेना पड़ता है, जिसका निरपवाद रूप से मतलब होता है राजनीतिक पटलों के साथ समझौता। सन् 1989 से 2014 तक, सभी आम चुनावों ने बहुदलीय गठबंधन सरकारों को प्रस्तुत किया है।[52] अपनी कमियों की बहुलता के बावजूद भारतीय राजनीतिक व्यवस्था विस्तृत प्रतिभागियों की सहभागिता पर आधारित है तथा धीरे — धीरे सबसे वंचित स्तर तक पहुँच रही है। इस कारण एक अपनत्व की भावना उत्पन्न हुई है जो पहचान का आंतरिक तत्व है। परंतु व्यवस्था की खामियाँ इसकी कई बुराईयों से सुस्पष्ट है - निरंतर गरीबी और भूख, व्यापक भ्रष्टाचार, केंद्रस्थल में बढ़ता हुआ माओवादी आंदोलन, तथा जम्मू-कश्मीर में अंतहीन हलचल हल्चह। इनमें से अंतिम विफलता ने पाकिस्तान के साथ तनाव को तीव्र किया है।[53] अत: भारतीय पहचान का अंदरूनी चेहरा अभी भी अनिश्चितता और तनाव के भाव से क्षतिग्रस्त है।

पाकिस्तान के लिए संकट हमेशा ही अधिक रहा था क्योंकिस्ही थी क्युँकि उसने गंभीर बाधाओं के साथ शुरुआत की थी। 'राष्ट्रवाद कीके मौलिक गैर-क्षेत्रीय दृष्टि' क◌ो भौतिक रूप से सीमित स्थान पर इतिहास के लाभ के बिना पिरोना बहुत मुश्किल था।[54] नृजातीय रूप से खंडित समाज में ऐसा करने का प्रयत्न एक विशालकाय प्रयास की मांग करताकस्ती है तथा पाकिस्तान के पास नन्म तो इस लायक नेतृत्व (जिन्ना और लियाकत अली खान के अकालघटित निधन क◌े बाद) नन्म ही संस्थागत ढांचा उपलब्ध था। सन् 1971 में पूर्वी पाकिस्तान से टूट कर बांग्लादेश का निर्माण निर्मान हुआ तथा अन्य प्रदेश भी अशान्त होने लगे। जबकि सेना तथा मुख्यधारा के राजनीतिक दल स्थायी स्थिरता लाने में विफल रहे, उनके तनावों के कारण ही इस्लामी चरमपंथ तथा 'जिहाद की संस्कृति' को राजनीतिक जगह मिली।[55] अपनी खंडित राजनीति के कारण पाकिस्तान उस अंदरूनी आत्मविश्वास को पैदा करने में असमर्थ रहा है जो उसे भारत, विशेष रूप से कश्मीर, के प्रति अधिक आशावादी दृष्टिकोण प्रदान करता।

पाकिस्तानी सरकार सञ्य नागरिक तथा सैन्य नियंत्रण के बीच डगमगाती रही ना स्ह है।[56] अयूब खान के नेतृत्व में सेना ने सन् 1958 में एक बेलगाम तथा अस्थिर सत्ता को पराभूत किया। परंतु सन् 1971 में पूर्वी पाकिस्तान को हारने बाद देश को साथ रखने में विफल होने पर सेना ने शक्ति पुन: नागरिकों को दे दी। ज़ुल्फ़िकार अली भुट्टो की पाकिस्तान पिपुल्स पार्टी (पीपीपी) ने भी कुछ बेहतर प्रदर्शन नहीं किया और सन् 1977 में जनरल ज़िया उल हक ने सत्ता पर कब्जा कर लिया। ज़िया ने भुट्टो पर मुकदमा चलाया, उन्हें मृत्युदण्ड दिया, तथा पाकिस्तानी शासन व्यवस्थासञ्य को इस्लाम की एक अधिक कठोर शैली की ओर पुनर्भिविन्यासित किया। परंतु ऐसा करने की प्रक्रिया में ज़िया नेनें कट्टरपंथी ताकतों को खुला छोड़ दिया। सन् 1988 में ज़िया की मृत्यु के बाद पाकिस्तान में नागरिक शासन की वापसी हुई जिसमें बेनज़ीर भुट्टो की के पीपीपी तथा नवाज़ शरीफ़ कीके पाकिस्तान मुस्लिम लीग के बीच एकांतर करते हुए उदासीनतापूर्वक प्रदर्शन हुआ। किंतु सेना को हतोत्साहित करने के नवाज़ के प्रयास के कारण जनरल परवेज़ मुशर्रफ़ द्वारा सन् 1999 में तख्तापलट किया गया हुअ। मुशर्रफ़ ने पहले मुख्य कार्यकारी तथा बाद में राष्ट्रपति के रूप में तब तक देश चलाया जब तक एक और लोक-सम्मत लहर ने सन् 2008 में नागरिक सरकारअधिकस की वापसी कसई नहीं करा दी । हालांकि मुशर्रफ़ राष्ट्रपति बने रहे, सत्ता का केन्द्र पीपीपी की ओर परिवर्तित हो गया, जो अभी आसिफ़ अली ज़रदारी के नेतृत्व में है। ज़रदारी ने अपनी पत्नी बेनज़ीर कीके हत्या के उपरांत इस दल का भार संभाला। सेना का आधिपत्य समय — समय पर संकटग्रस्त

होने के बावजूद कायम रहा है। सेना ने धार्मिक दलों के साथ गठबंधन कर, विरोधियों के खिलाफ उग्रवादी समूहों का कुशलतापूर्वक प्रयोग कर, तथा अमेरिका से वित्तीय और राजनीतिक समर्थन प्राप्त कर अपनी स्थिति मजबूत करने का प्रयत्न किया।[57] किंतु न ना तो प्रत्यक्ष नना ही अप्रत्यक्ष नियंत्रण ने बहुत लंबे समय तक कार्य किया तथा पाकिस्तानी राजनीति अस्थिरता से घिरीम्लान रही है।

प्रणालीगत प्रोत्साहन से चालित, भारत तथा पाकिस्तान, दोनों कश्मीर समस्या पर अपने शून्य-योग दृष्टिकोण से हट कर सीमा पार/नियंत्रण रेखा पर व्यक्तियों तथा वस्तुओं के आवागमन पर नियंत्रण कम कर संपर्क तथा संबंध के नए पुल बनाना चाहते हैं। किंतु राज्यगत स्तर के कारकों ने यह सुनिश्चित कर दिया कि शांति की ओर बढ़ते कदम अत्यंत धीमे बने रहें। भारत संशोधनवादी होने के बजाय यथास्थितिवादी रहा है। परंतु इसके पास पाकिस्तान के साथ संधि की ओर तेजी और मजबूती से बढ़ने की क्षमता का अभाव रहा है। गठबंधन सरकारों के दौर में वस्तुत: ऐसे हर मुद्दे पर मतैक्य बनाना, जो स्थापित नीति से महत्वपूर्ण बदलाव मांगता हो, असाधारण रूप से कठिन हो रहा है। इसके अतिरिक्त, 'हिंदुत्व' विचारधारा के उदय तथा पाकिस्तान के प्रति इस विचारधारा के तेजतर्रार रुख ने राजनीतिक समझौते को कठिन बना दिया है।

भारत तथा पाकिस्तान के बीच 'लोकतांत्रिक शांति' की संभावना निकट भविष्य में सीमित ही है।[58] यह स्वयंसिद्धि कि लोकतंत्र आपस में युद्ध नहीं करते, मात्र विकसित पूंजीवादी पूँजिवादी समाज में ही लागू लागु होता है। नना तो भारत नना ही पाकिस्तान उस दर्जे तक पहुँचने के निकट है। भारत अभी भी उन शक्तिशाली ताकतों से भेद्य है जो चुनावी उद्देश्यों के लिए पहचान के मुद्दों का चालाकी से उपयोग करते हैं। पकिस्तान एक 'संकर' लोकतंत्र बना हुआ है - लोकवाद तथा सैन्य शक्ति का अशांत मिश्रण - जहाँ लोकतांत्रिक दल एक दूसरे से 'बड़ी बोली' लगा ऐसे रूढ़िवादी तत्वों के तुष्टीकरण के इच्छुक हैं, जो भारत-पाकिस्तान मैत्री के विरुद्ध हैं। साथ ही, जब सेना की आंतरिक स्थिति संकटमय हो जाती है तब शांति की संभावना को सीमित रखना ही उसके लिए फलदायी है।[59] जबकि भारत पिछले कुछ वर्षों में एक अपेक्षाकृत 'आत्मविश्वासी देशसज्य' के रूप में उभरा है, पाकिस्तान के मामले में ऐसा नहीं हुआ।[60] फिर भी, भारत के आत्मविश्वास को बढ़ा कर नहीं देखना चाहिए। बड़ी बोली लगाने की राजनीति अभी लुप्त नहीं हुई है। विपक्षी दल बाह्य अन्य के साथ सुलह के बजाय विरोध जुटाते हैं तथा संघर्ष में अंतर्निहित संभावनाओं के विवर्धन के लिए सतर्क रहते हैं। अत:, भाजपा के नेता आडवाणी ने सन 2004 में इस बात पर जोर दिया कि 'मात्र भाजपा ही पाकिस्तान के जुड़ी समस्याओं का समाधान खोज सकती है क्योंकिक्युंकि हिंदू यह कभी नहीं सोचेंगे कि हमारे कृत्य अपविक्रय का उदाहरण हो सकते हैं'। साथ ही आडवाणी ने यह अनाश्चर्यजनक उपसिद्धांत जोड़ा - 'काँग्रेस ऐसा कभी नहीं कर सकती क्योंकि कयुंकि हिन्दू उस पर भरोसा नहीं करेंगे'।[61] अंततोगत्वा, दोनों देशों की सरकारें सरकार विशेष रूप से मजबूत नहीं हैं है और इस कारण कश्मीर के मुद्दे पर मध्यमार्ग द्वारा नजदीकी भविष्य में जोखिम भरी सफलता प्राप्त करने के आसार सीमित हैं।

व्यक्ति तथा नेतृत्व

विदेश नीति के निर्माण में व्यक्तियों की भूमिका को या तो कुछ अधिक ही विस्तार से देखा जाता है या फिर इस पर बहुत कम चर्चा होती है। इसका कारण यह है कि विश्लेषक या तो व्यक्तित्व पर अधिक ही केंद्रित होते हैं या फिर अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में देशोंसज्यों को अधिक महत्ता देते हैं। बड़ी घटनाओं में व्यक्तियों के प्रभाव को मापना कठिन है। फिर भी हम इस बात को नकार नहीं सकते कि कुछ अवसरों पर देशोंसज्यों के बीच के संबंधों को आकार प्रदान करने में व्यक्तियों का शक्तिशाली प्रभाव होता है। मिखाइल गोर्बाचेव का नाम इस प्रसंग में शीघ्र मानस में आ जाता है। गोर्बाचेव को इस बात का श्रेय जाता है कि वह वे शीत-युद्ध का अंत करने की पहल करने काकी राजनीतिक साहस तथा कौशल रखते थे।[62]

अलग-अलग नेताओं ने किस प्रकार भारत-पाकिस्तान संबंधों की दिशा को प्रभावित किया है? शुरुआती वर्षों में भारत के पास शक्तिशाली नेता थे जो आत्मविश्वास के साथ विदेश नीति का दिशा निर्धारण करते थे। विशेषकर नेहरू, विदेश नीति के निर्माण में

एक प्रमुख व्यक्ति थे। भारतीय नीति ने जो दिशा अपनाई, उसके निर्धारण का बड़ा भाग नेहरू के व्यक्तित्व, पसंद तथा निर्णयों पर आधारित था। आदर्शवाद तथा यथार्थवाद के बीच का यथेष्ट विरोधाभास उनकी नीतियाँ की विशेषता थी।[63] अतः, भारत की ओर से वैश्विक भूमिका अदा करने की नेहरू की रुचि को कठिनर शक्ति क्षमताओं पर अधारित यथार्थवादी उपक्रम का सहारा नहीं था। यह बात पाकिस्तान के विरुद्ध 1947-48 में तथा चीन के विरुद्ध सन् 1962 में भारतीय सेना के फीके प्रदर्शन से स्पष्ट हो गई। सेना के प्रभावी प्रयोग के लिए लाल बहादुर शास्री तथा इंदिरा गाँधी जैसी जैसे यथार्थवादी हस्तियांहस्ती कारगर सिद्ध हुईं हुए। शास्त्री ने पाकिस्तानी सेना को सन् 1965 में भारत से खदेड़ा तथा इंदिरा ने सन् 1971 में पाकिस्तान को निर्णायक रूप से परास्त तथा विभाजित किया।[64] तत्पश्चात्, शताब्दी के अंत तक जैसे -जैसे राजनीतिक शक्ति काँग्रेस के प्रभुत्व से स्थानांतरित हो गठबंधनों की अलझन तक पहुंचीपहुँचा, भारतीय नेता कोई बड़ी पहल करने के लिए बहुत कमजोर हो चले।

दूसरी ओर, स्वाधीनता के तुरंत बाद पाकिस्तान ने दो प्रमुख नेता - जिन्ना तथा लियाक़त अली खान - को खो दिया था। साथ ही शक्ति के लिए प्रबल प्रतिस्पर्धा के कारण नेता विदेश नीति को निर्णयात्मक दिशा देने में अक्षम रहे। ज़ुल्फिकार अली भुट्टो एक लोकवादी नेता होने के नाते उत्पन्न उम्मीदों पर खरे नहीं उतरे। साथ ही वह वे पूर्वी पाकिस्तान की क्षति तथा उसके उपरांत राजनीति में सेना कीके वापसी के केंद्र में भी थे। व्यक्ति विशेष सेनाध्यक्षों के बजाय पूरी की पूरी सेना ने भारत के प्रति उन्मुखीकरण को आकार दिया। जनरल ज़िया ने अपनीअपने अधिकांश राजनीतिक ऊर्जा को पाकिस्तान को एक इस्लामी साँचे में ढालने में तथा भारत से दूरी बनाए रखने में लगाया। बीसवीं शताब्दी के अंतिम चतुर्थांश ने असाधारण क्षमता वाला एक भी ऐसा नेता प्रस्तुत नहीं किया जो प्रणालीगत तथा राष्ट्रगत स्तर के कारकों द्वारा लगाए बंधनों पर विजय प्राप्त कर भारत-पाकिस्तान संबंधों की दिशा को बदलने में सफल हो सके। बेनज़िर भुट्टो तथा नवाज़ शरीफ़ दोनों ने अपेक्षाएँ तो बढ़ा दींदी किंतु वे उन्हें पूरा करने में असफल रहे। जैसे— जैसे पाकिस्तानी सज्य अक्षमता तथा भ्रष्टाचार के दलदल में फंसता चला गया, सेना ने अपनी स्थिति मजबूत बनाई तथा जनता अधिक असंतुष्ट होती चली गई। इन सब कारकों ने बढ़ती अशांति की आग में घी का काम किया।

सहस्राब्दी काके अंत होते—-होते, भारत-पाकिस्तान के आधिकारिक तौर पर परमाणु शक्ति बनने के बाद जिस संकट ने इस संबंध को घेरा, उसके कारण व्यक्तिगत पहल के अवसर प्रदान हुए। रसातल में झांकने के बाद दोनों देशों के राजनेताओं ने नए उपायों की खोज करने की कोशिश की। इस दिशा में भारतीय प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी श्रेय के पात्र हैं। वाजपेयी सन् 1998 के परमाणु परीक्षण के लगभग तुरंत बाद लगातार ही प्रयासरत रहे तथा उन्होंने सन् 1999 के आरंभ में लाहौर जा कर मैत्री का प्रयत्न किया। परंतु पाकिस्तान द्वारा सतही प्रतिक्रिया ने कुछ सप्ताहों के बाद ही कारगिल संकट को जन्म दिया। वाजपेयी तथा पाकिस्तानी राष्ट्रपति परवेज़ मुशर्रफ़ के नेतृत्व में समझौता करने के पारस्परिक प्रयास के फलस्वरूप सन् 2001 में आगरा में परामर्श हुए किन्तु कोई परिणाम नहीं निकला। 2001–02 संकट के थमने के बाद वाजपेयी तथा मुशर्रफ़ ने संतुलित प्रतिक्रिया दिखाई तथा सन् 2004 में विवाद के महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर समग्र वार्ता का आरंभ हुआ। हालांकि मुशर्रफ़ को पाकिस्तान के कारगिल अभियान के लिए भारत में अपमानित किया गया, उन्होंने पुराने दक़ियानूसी सिद्धांतों को त्यागने की उल्लेखनीय इच्छा प्रकट की। वाजपेयी के उत्तराधिकारी मनमोहन सिंह ने भी समान नम्यता दिखाई। सन् 2007 के मध्य से दोनों ने अप्रत्यक्ष रूप से कश्मीर को स्थायी रूप से बांटने पर विचार करने की नई तत्परता दिखाई है।[65] सिंह तथा पाकिस्तान के ज़रदारी ने निरंतरता को बनाए रखा। किंतु पाकिस्तान की आंतरिकके आंस्तिक समस्याओं तथा सन् 2008 के आतंकी हमले के बाद भारत-पाकिस्तान के बीच बढ़ते तनावों के कारण शांति प्रक्रिया धीमी होने लगी थी।

जैसा कि पहले देखा गया है, नेतृत्व द्वारा की गई पहल राष्ट्रगत स्तर की बाध्यताओं के कारण प्रतिबंधित रही। भाजपा के नेता आडवाणी, जो अब विपक्ष में थे, सन् 2005 में इस दरार को भरने का प्रयास कर रहे थे। किंतु अपने ही अनुयायिओं की आलोचना के कारण वे शीघ्र पीछे हटने के लिए मजबूर हो गए। आडवाणी के अनुयायी उनके द्वारा पाकिस्तान के साथ 'नरमीनर्मी' से पेश आने के

विरुद्ध थे। इसी प्रकार सन् 2008 की शरद ऋतु में ज़रदारी द्वारा कश्मीर में 'आतंकवादियों' की आलोचना ने पाकिस्तान में विरोध के एक तूफान को जगाया। फिर भी, दोनों देशों के नेताओं ने समग्र वार्ता को अनवरत कायम रखा तथा संबंधों को सुधारने की दिशा में महत्त्वपूर्ण प्रगति की। नेतृत्व की दृढ़ता के फलस्वरूप अनौपचारिक सिद्धांतों की एक श्रेणी ने निश्चित रूप से भारत-पाकिस्तान संबंधों को नया स्वरूप प्रदान किया। इस बात को समझ लिया गया कि नियंत्रण रेखा को बदलना संभव नहीं होगा परंतु संचार के विस्तार से इसके आगे बढ़ा जा सकता है; दोनों पक्षों में स्वशासन पर नया ध्यान दिया जाएगा; सैन्य बल को अंततः काफी हद तक कम किया जाएगा; तथा भारत और पाकिस्तान इस प्रक्रिया के क्रियान्वयन के तंत्र बानाने के लिए साथ मिल कर काम करेंगे ~~करेंगे~~।[66] सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह रही कि दोनों देशों ने अपने ~~अपनी~~ पुराने अडियल रूख ~~अनम्यता~~ को त्याग नना केवल सभी शेष प्रमुख विवादों पर वार्ता के लिए हामी भरी बल्कि कश्मीर पर अपने अपरक्राम्य तथा परस्पर अनन्य स्थिति का भी त्याग किया। दोनों ओर नई सोच की कमी नहीं थी।

तथापि, प्रणालीगत तथा राष्ट्रगत स्तर के कारकों से निर्गत होने वाले दबावों को प्रत्यादिष्ट करने के लिए असाधारण वचनबद्धता तथा कुशलाता वाले नेता की आवश्यकता होती है। गोर्बाचेव जैसे नेता (या नकारात्मक पक्ष में हिटलर जैसे नेता) असामान्य हैं। दक्षिण एशिया के संदर्भ में वाजपेयी असामान्य थे क्योंकि ~~क्योंकि~~ 1970 के दशक के मध्य से, जब वह ~~के~~ विदेश मंत्री थे, अच्छे पड़ोसी संबंध बनाने का उनका इतिहास रहा था। 1990 के दशक में वाजपेयी की दृढ़ता तथा निसंदेह सन् 2003 के बाद मुशर्रफ द्वारा सकारात्मक प्रतिक्रिया इस कठिन अनुभव की सीख की उपज थी~~थे~~ कि परमाणु अस्त्रों के आगमन ने उनके विकल्पों को तीक्ष्ण रूप से संकुचित कर दिया था। भारत तथा पाकिस्तान के नेता देशीय ~~सञ्यमत~~ स्तर के दबावों के आदेश को रद्द करने की क्षमता नहीं रखते थे। विशेष रूप से, आंतरिक राजनीति - अपेक्षाकृत कमजोर सरकारी नियंत्रण तथा प्रमुख रियायतों के प्रति विरोध - विद्यमान नीति से नाटकीय प्रस्थान की अनुमति नहीं देती।

***

भारत-पाकिस्तान संबंध सन् 1947 से सहस्राब्दी के अंत तक निरंतर द्वेषभाव से चिन्हित रहे। इस पूरी अवधि में प्रणालीगत, राष्ट्रगत तथा व्यक्तिगत स्तर के प्रावेगिक एक ही दिशा में प्रोत्साहित करते रहे। इसके अंतर्गत एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आया। सन् 1971 तक संबंधों में मजबूत देश ~~सञ्य~~/कमजोर देश ~~सञ्य~~ ढांचा स्पष्ट नहीं था। हालांकि भारत के पास मजबूत देश ~~सञ्य~~ के गुण थे, वह अपेक्षाकृत सतर्क था। पाकिस्तान कमजोर था, फिर भी दो बार युद्ध आरंभ करने में अधिक आक्रामक रहा। सन् 1971 के अंत में, काफी हद तक इंदिरा गाँधी की~~के~~ पहल के कारण, भारत ने पाकिस्तान को परास्त तथा विभाजित कर एक स्पष्टतः परिभाषित मजबूत देश ~~सञ्य~~/कमजोर देश~~सञ्य~~ का स्वरूप उत्पन्न किया। यह 1980 के दशक के अंत तक चलता रहा जब पाकिस्तान ने इस परिस्थिति के निवारण हेतु परमाणु अस्त्रों के अधिग्रहण को अपना लक्ष्य बनाने की ठानी।

1980 के दशक का ~~के~~ अंत होते— होते परमाणु अस्त्रों के प्रच्छन्न आगमन तथा क्षेत्र में आर्थिक उदारीकरण के आरंभ के बाद संघर्ष से जुड़ी~~म्स~~ प्रणालीगत बाधाएँ तथा सहयोग के प्रोत्साहन प्रत्यक्ष होने लगे। नेतागण, 1990, 1999, तथा 2001–02 के संकटों से सीख लेकर व्यवस्था के प्रवर्तमान बदलावों के अनुकूल होने की चेष्टा करने लगे; चुप्पी तोड़ने की प्रमुख पहल वाजपेयी तथा मुशर्रफ़ ने की तथा उनके उत्तराधिकारियों~~उत्तसधिकमसीयों~~ ने इस नए रुख को बरकरार रखा। सन् 2008 के मुंबई आतंकी हमलों के झटके ने शांति प्रक्रिया को बहुत धीमा किया परंतु इसका अवपथन नहीं किया। फिर भी, राष्ट्रगत-स्तर की राजनीति प्रणालीगत तथा नेतृत्व के बदलावों के अनुकूल नहीं थी। सरकारों की अपेक्षाकृत कमजोरी, स्थायी पहचान की राजनीति, तथा दोनों देशों के धार्मिक दक्षिणपंथ और पाकिस्तानी सेना जैसे शक्तिशाली समूहों द्वारा मैत्री को अवरुद्ध करने की तत्परता के कारण संपर्क तथा संबंध के नए पुल बनाने के प्रयास बाधित हुए।

भारत-पाकिस्तान संबंध किस दिशा में रहे हैं~~जा रहा है~~? सहयोग के लिए प्रणालीगत दबाव बहुत शक्तिशाली हैं और इनका पीछे हटना

नामुमकिन सा है। नेतागण, जिनको नीति-निर्माण की प्रक्रिया में प्रत्यक्ष रूप से इन दबावों का सामना करना है, बदलाव की आवश्यकता~~आवश्यक्ता~~ को समझ सकते हैं तथा समाधान के प्रयास जारी रख सकते हैं। परंतु वे भी राष्ट्र~~सञ्य~~-स्तर की राजनीति के कारण धीमे हो सकते हैं। मौजूदा परिस्थिति में, संबंधों को या तो सहयोग के उच्च स्तर की ओर ले जाने या फिर निरंतर द्वेषभाव के नवीकरण के लिए दोनों पक्षों में असाधारण रूप से दृढ़ तथा कुशल नेता की आवश्यकता~~आवश्यक्ता~~ है। क्योंकि ~~क्युंकि~~ यह संभव नहीं कि प्रणालीगत प्रवृत्तियाँ विपरीत दिशा में जाएँ~~मी~~, व्यवस्था-राज्य पूरकता मात्र सकारात्मक ही हो सकती है तथा लगभग निश्चित रूप से नकारात्मक नहीं हो सकती है। परंतु सकारात्मक रूपान्तरण के लिए हमें राष्ट्र~~सञ्य~~-स्तर पर उन बदलावों की प्रतीक्षा करनी होगी जो दोनों पक्षों में स्वयं की पहचान तथा लोकतंत्रीकरण में यकीन~~विश्रंभ~~ उत्पन्न करे। जैसा कि हमने देखा, ये ~~यह~~ दोनों प्रक्रियाएँ~~, जैसा कि हमने देखा,~~ बारीकी से एक साथ गुंथी हुई ~~मुंथे हुए~~ हैं। उपमहाद्वीप की राजनीतिक वास्तविकताओं के मद्देनजर ये भी धीमी गति से चलने वाली~~काले~~ हैं। तदनुसार, हम यह अपेक्षा कर सकते हैं कि बुरी से बुरी स्थिति में ~~बुस से बुस~~, दोनों देशों के बीच स्थायी किन्तु संयमित द्वेषभाव रहेगा तथा सब से अच्छी हालत में, संबंधों में नाटकीय परिवर्तन के बजाय वृद्धिशील और संचयी सुधार आएँगे।

टिप्पणियां ~~टिपन्नियाँ~~

1. विस्तृत समीक्षा तथा विश्लेषण के लिए देखें, सुमित गाँगुली (2002), कनफ्लिक्ट अनएन्डिंग: इण्डिया-पाकिस्तान टैंशन्स सिन्स 1947 (नई दिल्ली: ऑक्सफ़ोर्ड~~फ़र्ड~~ यूनिवर्सिटी प्रेस)। इस 'चिरस्थायी प्रतिद्वंद्विता' पर विचार-विमर्श की विस्तारित श्रृंखला के लिए देखें, टी०वी० पॉल (सं०) (2005), द इण्डिया-पाकिस्तान कॉनफ़्लिक्ट: ऐन एन्ड्यूरिंग राइवलरी (कैम्ब्रिज~~कैम्बरिज~~: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस)।

2. प्रणालीगत संरचना तथा प्रक्रिया के बीच कुशल विभेद के लिए देखें, केनेथ एन० वॉल्ट्ज़ (1979), थेरी ऑफ़ इंटरनैशनल पॉलिटिक्स (लेक्सिंगटन, मैसाच्यूसेट: ऐड्डीसन-वेस्ली).

3. उदारवाद के ऐसे रूप के अब तक के सर्वश्रेष्ठ प्रतिपादन हेतु देखें, रॉबर्ट ओ० कोहेन तथा जॉसेफ़ एस० नाई, जूनियर (1977), पावर एंड ~~ऐप्ड~~ इंटरडिपेन्डेन्स: वर्ल्ड पॉलिटिक्स इन ट्रान्ज़ीशन (बॉस्टन: लिटल ब्राउन)।

4. मिखाइल गोर्बाचेव (1988), पेरेस्त्रोइका: न्यू इंकिंग फॉर आर कंट्री एंड~~ऐप्ड~~ द वर्ल्ड (न्यू यॉर्क: हार्पर एंड~~ऐप्ड~~ कॉलिन्स)। गोर्बाचेव की असफलता से उनके अंतदृष्टि की वैधता~~वैद्यता~~ कम नहीं होती।

5. बेन्जामिन मिलर (2002), वेन ओप्पोनेन्ट्स कोऑपरेट: ग्रेट पावर कनफ्लिक्ट एंड~~ऐप्ड~~ कोलैबोरेशन इन वर्ल्ड पॉलिटिक्स (एन्न आर्बर: यूनिवर्सिटी ऑफ़ मिचिगन प्रेस)।

6. इस संकल्पना के विस्तृत विश्लेषण तथा विविध संदर्भों में इसके परिवर्तनीय प्रयोग के लिए देखें, राजेश एम० बसरूर (2000), इण्डियाज़ एक्सटर्नल रिलेशन्स: अ थेयोरेटिकल अनालिसिस (नई दिल्ली: कॉमनवेल्थ पब्लिशर्स)।

7. माइकल मैन्डलबॉम (1988), द फ़ेट ऑफ़ नेशन्स: द सर्च फ़ॉर नैशनल सिक्यूरिटी इन द नाइनटीन्थ एंड~~ऐप्ड~~ ट्वेन्टीयथ सेंचुरीज़ (कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस)।

8. वर्ल्ड बैंक (2000), वर्ल्ड डेवलपमेन्ट रिपोर्ट 1999–2000 (वाशिंगटन, डीसी: वर्ल्ड बैंक)।

9. स्टीफ़न पी० कोहेन (2005), द आइडिया ऑफ़ पाकिस्तान (नई दिल्ली: ऑक्सफ़र्ड यूनिवर्सिटी प्रेस), पृष्ट 103।

10. गाँगुली, कनफ्लिक्ट अनएन्डिंग, पृष्ट 7-8।

11. अमैरी डी' रियकोर्ट (1982–3), 'इण्डिया ऐण्ड पाकिस्तान इन द शैडो ऑफ़ अफगानिस्तान', फ़ॉरेन अफ़ेयर्स, 81 (2), पृष्ठ~~ट~~ 433।

12. इंटरनैशनल इंस्टीट्यूट ~~इंस्टिच्यूट~~ ऑफ़ स्ट्रैटजिक स्टडीज़ (1999), द मिलिट्री बैलेंस, 1999–2000 (ऑक्सफ़र्ड: ऑक्सफ़र्ड यूनिवर्सिटी प्रेस)।

13. पूर्वोक्त।

14. आर०जी० गिडाधुबली (2005), 'इण्डिया-पाकिस्तान ट्रेड: प्रॉबलेम्स ऐण्ड प्रॉस्पेक्ट्स', पी०एम० कामत (सं०), इण्डिया-पाकिस्तान रिलेशन्स: कोर्टिंग पीस फ्रॉम द कॉरीडोर्स ऑफ़ वॉर (नई दिल्ली: प्रॉमिला ऐण्ड कंपनी, बिबलियोफाइल एशिया के सहयोग से), पृष्ठ 135 में। व्यापार से जुड़ी समस्याओं के लिए देखें, बिदंड एम० चेन्गप्पा (1999), 'इण्डिया-पाकिस्तान ट्रेड रिलेशन्स', स्ट्रैटजिक अनालिसिस, 23 (3), पृष्ठ 443–57।

15. इंटरनैशनल मोनेटरी फण्ड (1998), डाइरेक्शन ऑफ़ ट्रेड स्टैटिस्टिक्स ईयरबुक, 1998 (वाशिंगटन, डीसी: इंटरनैशनल मोनेटरी फण्ड)।

16. इरफान हुसैन (1997), पाकिस्तान (कराची: ऑक्सफ़र्ड यूनिवर्सिटी प्रेस), पृष्ठ 12; मनीषा टीकेकार, 'कल्चरल इडियम इन द इण्डो-पाक कनफ्लिक्ट' से उद्धृत, कामत (सं०), इण्डिया-पाकिस्तान रिलेशन्स, पृष्ठ 196, में।

17. स्कॉट डी० सेगन तथा केन्नेथ वॉल्ट्ज़ (2003), द स्प्रेड ऑफ़ न्यूक्लियर विपन्स: अ डिबेट रीन्यूड (न्यू यॉर्क तथा लंदन: डब्लू०डब्लू० नॉर्टन)। लेखकों ने तीसरे अध्याय में विशेष रूप से दक्षिण एशिया में स्थिरता के मुद्दे पर बहस की ~~किया~~ है। साथ ही देखें, सुमित गाँगुली (2008), 'न्यूक्लियर स्टेबिलिटी इन साउथ एशिया', इंटरनैशनल सिक्यूरिटी, 33 (2), पृष्ट 45–70, तथा एस० पॉल कपूर (2008), 'टेन ईयर्स ऑफ़ इनस्टेबिलिटी इन अ न्यूक्लियर साउथ एशिया', इंटरनैशनल सिक्यूरिटी, 33 (2), पृष्ठ 71–94।

18. राजेश एम० बसरूर (2008), साउथ एशियाज़ कोल्ड वॉर: न्यूक्लियर विपन्स एंड~~ऐण्ड~~ कनफ्लिक्ट इन कॉम्पैरेटिव पर्सपेक्टिव (एबिंगडन तथा न्यू यॉर्क: रॉलेज), विशेष रूप से दूसरा अध्याय देखें।

19. पी०आर० चारी, परवेज़ इकबाल चीमा, तथा स्टीफ़न पी० कोहेन (2007), फ़ोर क्राईसिस एंड~~ऐण्ड~~ अ पीस प्रोसेस: अमेरिकन इंगेजमेन्ट इन साउथ एशिया (वाशिंगटन डीसी: ब्रूकिंग्स इंस्टीच्यूशन प्रेस); सुमित गाँगुली तथा डेविन टी० हैगर्टी (2005), फीयरफुल सिमेट्री: इण्डिया-पाकिस्तान क्राईसिस इन द शैडो ऑफ़ न्यूक्लियर विपन्स (नई दिल्ली: ऑक्सफ़ोर्ड~~फ़र्ड~~ यूनिवर्सिटी प्रेस)।

20. एस० पॉल कपूर (2007), डेन्जरस डिटर्रेन्ट: न्यूक्लियर विपन्स प्रोलिफरेशन एंड~~ऐण्ड~~ कनफ्लिक्ट इन साउथ एशिया (स्टैनफ़र्ड, कैलिफ़ोर्निया: स्टैनफ़र्ड यूनिवर्सिटी प्रेस)। साथ ही देखें, पीटर चॉक (2001), 'पाकिस्तान्स रोल इन द कश्मीर इंसरजेन्सी', जेन्स इंटेलिजेन्स रिव्यू, 1 सितम्बर, रैण्ड कॉर्पोरेशन की वेबसाइट पर प्रतिलिपित। देखे: http://www.rand.org/hot/op-eds/090101JIR.html (14 फरवरी 2003 को देखा गया), तथा प्रवीण स्वामी (2004), 'फ़ेल्ड थ्रेट्स एंड~~ऐण्ड~~ फ़्लॉड फेन्सेज़: इण्डियाज़ मिलिट्री रिस्पॉन्सेज़ टु पाकिस्तान्स प्रॉक्सी वॉर', इण्डिया रिव्यू, 3 (2), पृष्ट 147–70। यह समर्थन स्वतंत्र 'ख़ालिस्तान' के लिए लड़ने वाले सिख अलगाववादियों के लिए सहायता के रूप में पहले ही प्रारंभ हुआ था~~हुई थी~~, किन्तु कश्मीर के लोक-सम्मत लहर के दौरान यह तीव्र हो गया।

21. ब्रूस रीडेल (2002), अमेरिकन डिप्लोमेसी एंड~~ऐण्ड~~ द 1999 कारगिल~~कार्गिल~~ समिट एट ब्लेयर हाउस (फ़िलाडेल्फ़िया, पेनसिलवेनिया: यूनिवर्सिटी ऑफ़ पेनसिलवेनिया, सेंटर फॉर द एडवांस्ड स्टडी ऑफ़ इण्डिया), पृष्ठ 2; विकास कपूर तथा विपिन नारंग (2001), 'द फेट ऑफ़ कश्मीर: इंटरनैशनल~~इंटरनैशनल~~ लॉ ऑर लॉलेसनेस?', स्टैनफ़र्ड लॉ जर्नल, 31 (1), http://www.stanford.edu/group/sjir/3.1.06_kapur-narang.html (28 मई 2009 को देखा गया)। हालांकि 1999 की घटनाओं को अकसर 'युद्ध' के तौर पर देखा जाता है, लेखक भारतीय सेना के पूर्व डीजीएमओ रहे वी०आर० राघवन के साथ सहमति~~सहम्मती~~ रखते हैं कि कारगिल युद्ध नहीं अपितु 'भारतीय इलाके को घुसपैठियों से खाली कराने के लिए स्थानीय सैन्य कार्रवाई की एक श्रृंखला थी'। वी०आर० राघवन (2000), 'लिमिटेड वॉर एंड~~ऐण्ड~~ स्ट्रैटजिक लायबिलिटी', द हिंदू, 2 फरवरी, http://www.hinduonnet.com/thehindu/2000/02/02/stories/05022523.htm (21 अक्तूबर 2008 को देखा गया)।

22. राजेश एम० बसरूर (2005), 'कोअर्सिव डिप्लोमेसी इन अ न्यूक्लियर एन्वायरमेन्ट: द दिसम्बर 13 क्राइसिस', रफ़ीक दोसानी तथा हेनरी रोवेन (सं०), प्रोसपेक्ट्स फ़ॉर पीस इन साउथ एशिया (स्टैनफ़र्ड, कैलिफ़ोर्निया: स्टैनफ़र्ड यूनिवर्सिटी प्रेस) में; सुमित गाँगुली तथा आर० हैरीसन वैगनर (2004), 'इण्डिया एंड~~ऐण्ड~~ पाकिस्तान: बारगेनिंग इन द शैडो ऑफ़ न्यूक्लियर वॉर', जर्नल ऑफ़ स्ट्रैटजिक स्टडीज़, 27 (3), पृष्ट 479–507।

23. एन्जेला रबासा, रॉबर्ट डी० ब्लैकविल, पीटर चॉक, किम क्रेगिन, सी० क्रिस्टीन फ़ेयर, ब्रायन ए० जैक्सन, ब्रायन माइकल जेन्किन्स, सेठ जी० जोन्स, नेथेनियल शेश्टक, तथा ऐशली जे० टेल्लिस (2009), द लेसन्स ऑफ़ मुंबई (सैन्टा मोनिका, कैलिफ़ोर्निया: रैण्ड)।

24. हालांकि यह कहा जा सकता है कि इस समय कोई वास्तविक संकट नहीं था, परंतु यह निष्कर्ष पूर्ण आत्मविश्वास के साथ नहीं निकाला जा सकता। मई 2009 में भारतीय वायुसेना के प्रमुख फ़ली मेजर ने यह स्पष्ट किया की भारत द्वारा प्रहार की संभावना बन चुकी थी। यह स्पष्टीकरण आतंकी हमले के तुरंत बाद आया था~~आई थी~~, जिसके लिए ~~पाकिस्तान को~~ भारत के भीतर व्यापक रूप से पाकिस्तान को दोषी ठहराया गया था।

‘इण्डिया केम क्लोज़ टु स्ट्राइकिंग पाक आफ़्टर 26/11: एयर चीफ’, द टाइम्स ऑफ़ इण्डिया, 28 मई 2009, http://timesofindia.indiatimes.com/India-came-close-to-striking-Pak-after-2611-Air- chief/articleshow/4586233.cms (28 मई 2009 को देखा गया)।

25. वर्गीज़ कोइत्रा (2007), ‘द ऐडवॉन्सिंग पीस प्रोसेस’, इकॉनमिक एंडऐण्ड पॉलिटिकल वीकली, 41 (52), 6 जनवरी, पृष्ठष्ठ 10–13।

26. डेनियल बेल (1989), ‘द थर्ड टेक्नोलॉजिकल रिवोल्यूशन एंडऐण्ड इट्स पॉसिबल कॉन्सिक्वेन्सेज़’, डिस्सेन्ट, 36 (2), पृष्ठष्ठ 164–76।

27. इंटरनैशनल मोनेटरी फण्ड (1990), इंटरनैशनल फ़ाइनैन्शियल स्टैटिस्टिक्स ईयरबुक 1990 (वाशिंगटन, डीसी: इंटरनैशनल मोनेटरी फण्ड)।

28. निजेल हैरिस (1986), द एंड ऑफ़ द थर्ड वर्ल्ड: न्यूली इंडस्ट्रीयलाइज़िंग कंट्रीज़ एंडऐण्ड द डिक्लाइन ऑफ़ एनऐन आइडियोलॉजी (लंदन: पेंगुइन बुक्स)।

29. ‘वॉर ऐट वॉट कॉस्ट?’, द हिंदू, 6 जनवरी 2002, http://www.hinduonnet.com/thehindu/2002/01/06/stories/2002010600681500.htm (21 अक्तूबर 2008 को देखा गया); संदीप दीक्षित (2002), ‘पेइंग द पाइपर’, द हिंदू, 9 जून, http://www.hinduonnet.com/thehindu/2002/06/09/stories/2002060900191600.htm (21 अक्तूबर 2008 को देखा गया)।

30. थॉमस एल० फ़्रीडमैन (2002), ‘इण्डिया, पाकिस्तान एंडऐण्ड जीई’, न्यू यॉर्क टाइम्स, 11 अगस्त, http://query.nytimes.com/gst/fullpage.html?res=940CEED9153AF932 A2575BC0A9649C8B63 (21 अक्तूबर 2008 को देखा गया)।

31. ‘इण्डिया इम्पोर्ट्स टु फ्लड पाक मार्केट्स’, न्यूज़ इंटरनैशनल, 19 जुलाई 2008, http://thenews.jang.com.pk/top_story_detail.asp?Id=16070 (19 जुलाई 2008 को देखा गया)।

32. दोनों दिनों के आंकड़े दो अलग स्रोतों से लिए गए हैं: ‘इण्डिया, पाक अग्री ऑन ईज़िंग नॉर्म्स फ़ॉर सीमेन्ट, टी ट्रेड’, द टाइम्स ऑफ़ इण्डिया, 2 अगस्त, http://timesofindia.indiatimes.com/India/India_Pak_agree_on_easing_norms_for_cement_tea_trade_/articleshow/2249954.cms (2 अगस्त 2007 को देखा गया) और ‘न्यू पाकिस्तान ट्रेड पॉलिसी टु डबल इण्डो-पाक ट्रेड’, द टाइम्स ऑफ़ इण्डिया, 24 जुलाई 2008, http://timesofindia.indiatimes.com/India/India_Pakistan_trade_policy_to_double_Indo-Pak_trade/articleshow/3274837.cms (24 जुलाई 2008 को देखा गया)।

33. राजेश एम० बसरूर (2006), ‘इण्डियाज़ हार्ड च्वॉइस’, हर्टलैन्ड: यूरेशियन रिव्यू ऑफ़ जियोपॉलिटिक्स, 3, पृष्ट 42–7, http://www.heartland.it/_lib/_docs/2006_03_The_Eastern_challenge.pdf (23 अक्तूबर 2008 को देखा गया); एस०जी० पाण्डियान (2005), ‘एनर्जी ट्रेड ऐज़ अ कॉन्फिडेन्स-बिल्डिंग मेज़र बिटवीन इण्डिया एंडऐण्ड पाकिस्तान: अ स्टडी ऑफ़ द इण्डो-ईरान ट्रान्स-पाकिस्तान पाइपलाइन प्रोजेक्ट, कंटेम्पोररी साउथ एशिया, 14 (3), पृष्ठष्ठ 307–20।

34. ज़ुबैर अहमद (2008), ‘पाकिस्तान फ़िल्म मेक्स इण्डिया रिकॉर्ड’, बीबीसी न्यूज़, 14 जुलाई, http://news.bbc.co.uk/go/pr/fr/-2/hi/south_asia/7506364.stm (11 अगस्त 2008 को देखा गया)।

35. दिनकर वशिष्ट तथा गौरव शर्मा (2009), ‘वन थिंग पाक डज़न्ट सी रेड ओवर: टोमैटोज़ फ़्रॉम इण्डिया’, इण्डियन एक्सप्रेस, 1 मार्च, http://www.indianexpress.com/news/one-thing-pak-doesnt-see-red-over-tomatoes-from-india/429352/ (1 मार्च 2009 को देखा गया)।

36. जॉन मिलर (2008), ‘ग्लोबल ट्रेड टॉक्स फ़ेल ऐज़ न्यू जायन्ट्स फ्लेक्स मसल’, वॉल स्ट्रीट जर्नल, 30 जुलाई, पृष्ठष्ठ ए.1।

37. नितिन सेठी (2008), ‘इण्डिया, चाइना ज्वाइन हैन्ड्स अगेंस्ट रिच कन्ट्रीज़’, द टाइम्स ऑफ़ इण्डिया, 28 अगस्त, http://timesofindia.indiatimes.com/Climate_talks_India_China_join_hands/articleshow/3413939.cms (21 अक्तूबर को देखा गया)।

38 तारिक़ बट (2008), ‘नैशनल डेट्स [सिक] अप बाइ रुपीज़ 900 बिलियन ऐज़ रुपी प्लन्जेज़’, न्यूज़ इंटरनैशनल, 20 अक्तूबर, http://www.thenews.com.pk/top_story_detail.asp?Id=17906 (21 अक्तूबर 2008 को देखा गया); इकरम सहगल (2008), ‘द “हवाला” ड्रेन’, न्यूज़ इंटरनैशनल, 21 अक्तूबर, http://www.thenews.com.pk/daily_detail.asp?id=142168 (21 अक्तूबर 2008 को देखा गया)।

39. सिद्धार्थ वरदराजन (2008), ‘एनएसजी लिफ्ट्स सैन्कशन्स ऑन इण्डिया’, द हिंदू, 7 सितम्बर,

http://www.thehindu.com/2008/09/07/stories/2008090757400100. htm (7 सितम्बर 2008 को देखा गया)।

40. ऐशली जे० टेलिस (2008), 'द मेरिट्स ऑफ़ डीहाईफनेशन: एक्सप्लेनिंग यूएस सक्सेस इन एन्गेजिंग इण्डिया ऐण्ड पाकिस्तान', वाशिंगटन क्वार्टर्ली, 31 (4), पृष्ठ 21–42।

41. स्टीफेन ब्लैन्क (2007), 'द जियोस्ट्रैटजिक इंप्लीकेशन्स ऑफ़ द इण्डो-अमेरिकन स्ट्रैटजिक पार्टनरशिप', इण्डिया रिव्यू, 6 (1), पृष्ठ 1–24।

42. 'इण्डियाज़ न्यूक्लियर एनर्जी ट्रेड टु टच यूएसडी 100 बिलियन इन 10 ईयर्स: यूएस', द टाइम्स ऑफ़ इण्डिया, 9 सितम्बर 2008, http://timesofindia.indiatimes.com/India/IndiasN-energy_trade_to_touch_USD_100_bn_in_10_yrs_US/articleshow/3464364.cms (10 सितम्बर 2008 को देखा गया)।

43. समान तर्क के लिए देखें, ई० श्रीधरण (2005), 'इमप्रूविंग इण्डो-पाकिस्तान रिलेशन्स: इंटरनैशनल रिलेशन्स थैरी, न्यूक्लियर डिटर्रेन्स ऐण्ड पॉसिबिलिटीज़ फ़ॉर इकॉनमिक कोऑपरेशन', कंटेम्पोररी साउथ एशिया, 14 (3), पृष्ठ 321–39।

44. राजेन हर्षे (2005), 'इण्डिया-पाकिस्तान कनफ्लिक्ट ओवर कश्मीर: पीस थ्रू डेवलपमेन्ट कोऑपरेशन', साउथ एशियन सर्वे, 12 (1), पृष्ठ 47–60।

45. सुगता बोस तथा आयशा जलाल (2004), मॉडर्न साउथ एशिया: हिस्ट्री, कल्चर, पॉलिटिकल इकॉनमी, द्वितीय संस्करण (लंदन तथा न्यू यॉर्क: रॉलेज), पृष्ठ 164।

46. स्टीवन कल्ल क्ले रामसे, स्टीफन वेबर, तथा ईवन ल्यूइस (2008), 'पाकिस्तान एंड इण्डियन पब्लिक ओपीनियन ऑन कश्मीर एंड इण्डो-पाक रिलेशन्स', वर्ल्ड पब्लिक ओपीनियन डॉट ऑर्ग, वाशिंगटन डीसी, 16 जुलाई, http://www.worldpublicopinion.org/pipa/pdf/jul08/Kashmir_Jul08_rpt.pdf (23 अगस्त 2008 को देखा गया)।

47. थॉमस हाईलैन्ड एरिक्सेन (2002), एथनिसिटी एंड नैशनलिज़्म, द्वितीय संस्करण (लंदन तथा स्टर्लिंग, वर्जीनिया: प्लूटो प्रेस, पृष्ट 11–13। 'एमिक' तथा 'एटिक' पद 'फनेमिक्स' तथा 'फनेटिक्स' से व्युत्पन्न हुए हैं। पूर्वोक्त, पृष्ठ 12।

48. मायकल फ़र्कायटेन (2005), द सोशल साइकोलॉजी ऑफ़ एथनिक आइडेन्टिटी (होव तथा न्यू यॉर्क: साइकोलॉजी प्रेस), पृष्ठ 50–4।

49. इंदिरा के पुत्र राजीव गाँधी 1984 से 1989 तक प्रधानमंत्री थे। राजीव की विधवा सोनिया गाँधी के नेतृत्व में काँग्रेस पार्टी को 2004 के चुनाव में विजय प्राप्त हुई। परंतु सोनिया ने मनमोहन सिंह को प्रधानमंत्री बनाया तथा पार्टी के प्रमुख होने के नाते अंतिम अधिकार अपने पास रखा।

50. प्रताप भानु मेहता (2006), 'आइडेन्टिटी पॉलिटिक्स इन ऐन एरा ऑफ़ ग्लोबलाइज़ेशन', ए० केल्ली, रामकिशन एस० राजन तथा जीलियन एच०एल० गोह (सं०), मैनेजिंग ग्लोबलाइज़ेशन: लेसन्स फ़्रॉम इण्डिया एंड चाइना (सिंगापुर: वर्ल्ड साइन्टिफिक प्रेस) में।

51. मनजीत एस० परदेसी तथा जेनिफ़र एल० ओटकिन (2008), 'सेक्युलरिज़्म, डेमोक्रेसी, एंड हिंदू नैशनलिज़्म इन इण्डिया', एशियन सिक्यूरिटी, 4 (1), पृष्ठ 23–40।

52. भारत के चुनाव के विस्तृत आँकड़ों के लिए देखें भारतीय चुनाव आयोग की वेबसाइट: http://www.eci.gov.in

53. भारतीय लोकतंत्र के समक्ष कई शेष चुनौतियों के लिए देखें राजेश एम० बसरूर (सं०) (2009), चैलेंजेस फॉर इण्डियन डेमोक्रेसी (नई दिल्ली: ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस)।

54. डेविड गिल्मार्टिन (1998), 'पार्टीशन, पाकिस्तान, एंड साउथ एशियन हिस्ट्री: इन सर्च ऑफ़ अ नैरेटिव', जर्नल ऑफ़ साउथ एशियन हिस्ट्री, 57 (4), पृष्ठ 1068–95।

55. जेसिका स्टर्न (2002), 'पाकिस्तान्स जिहाद कल्चर', हार्वे डब्लू० कुश्नर (सं०), एसेन्शियल रीडिंग्स ऑन पॉलिटिकल टेररिज़्म: अनालिसिस ऑफ़ प्रॉब्लेम्स एंड प्रॉस्पेक्ट्स फ़ॉर द ट्वेन्टी फ़र्स्ट सेंचुरी (न्यू यॉर्क: गोर्डियन नॉट बुक्स) में।

56. इर्म हलीम (2003), 'एथनिक एंड सेक्टेरियन वायलेंस एंड द प्रोपेन्सिटी टुवॉर्ड्स प्रिटोरियनिज़्म इन पाकिस्तान', थर्ड वर्ल्ड क्वार्टर्ली, 24 (3), पृष्ठ 463–77।

57. हुसैन हक्कानी (2005), पाकिस्तान: बिटवीन मॉस्क एंडऐण्ड मिलिट्री (लाहौर: वैन्गार्ड बुक्स)।

58. लोकतांत्रिक शांति के विचार की सम्पन्न बौद्धिक इतिहास है। हाल के समीक्षा के लिए देखें, थॉमस जे निस्ले (2008), 'द पग्नेशस एंडऐण्ड द पैसिफिक: वाई सम डेमोक्रेसीज़ फाइट वॉर्स', इंटरनैशनल पॉलिटिक्स, 45 (2), पृष्ठ 168–81। दक्षिण एशिया के संदर्भ में इसकी सीमित उपयुक्तत ा के लिए देखें, सुमित गाँगुली, 'वॉर एंडऐण्ड कनफ्लिक्ट बिटवीन इण्डिया एंडऐण्ड पाकिस्तान: रीविज़िटिंग द पैसिफ़ाइन्ग पावर ऑफ़ डेमोक्रेसी', मिरियम फ़ेंडिअस एल्मैन (1997) (सं०), पाथ्स टु पीस: इज़ डेमोक्रेसी द ऐन्सर? (कैम्ब्रिज, मैसाचुसेट्स और लंदन: एमआईटी प्रेस) में।

59. 'संकर लोकतंत्र' के रूप में पाकिस्तान पर देखें, रीता चौधरी ट्रेम्बले तथा जूलियन शोफिल्ड (2005), 'इंस्टीट्यूशनल कॉज़ेज़ ऑफ़ द इण्डिया-पाकिस्तान राइवलरी', पॉल (सं०), इण्डिया-पाकिस्तान कॉनफ्लिक्ट, पृष्ठ 227–37 में।

60. क्रिस्टोफ़ जैफ़रलो (2002), 'इण्ड्िया एंडऐण्ड पाकिस्तान: इंटरप्रेटिंग द डाइवर्जेंस ऑफ़ टू पॉलिटिकल ट्रैजेक्टरीज़', कैम्ब्रिज रिव्यू ऑफ़ इंटरनैशनल अफ़ेयर्स, 15 (2), पृष्ठ 251–67।

61. सिद्धार्थ वरदराजन (2004), 'बीजेपी मे प्ले स्पॉयलर इन फ़ॉरेन अफ़ेयर्स', द टाइम्स ऑफ़ इण्डिया, 14 मई, में उद्धृत, http://timesofindia.indiatimes.com/articleshow/676324.cms (14 मई को देखा गया)।

62. व्लादीस्लाव एम० ज़ुबोक (2002), 'गोर्बाचेव ऐण्ड द एंडस्न्ड ऑफ़ द कोल्ड वॉर: पर्सपेक्टिव ऑन हिस्टरी एंडऐण्ड पर्सनैलिटी', कोल्ड वॉर हिस्टरी, 2 (2), पृष्ठ 61–100। साथ ही देखें, ज़ाक लीवेस्क (1997), द एनिग्मा ऑफ़ 1989: द लिबरेशन ऑफ़ ईस्टर्न युरोप (बर्कली, कैलिफ़ोर्निया: यूनिवर्सिटी ऑफ़ कैलिफ़ोर्निया प्रेस)।

63. जयंतानुज बंधोपाध्याय (1979), द मेकिंग ऑफ़ इण्डियाज़ फ़ॉरेन पॉलिसी: डिटर्मिनेन्ट्स, इंस्टीट्यूशन्स, प्रोसेसेज़, एंडऐण्ड पर्सनैल िटीज़, संशोधित संस्करण, (नई दिल्ली: अलाइड पब्लिशर्स), पृष्ठ 291–8। साथ ही देखें, एम०एस० राजन, 'इंट्रोडक्शन: इण्डियाज़ फ़ॉरेन पॉलिसी अंडर नेहरू', एम०एस० राजन (सं०) (1976), इण्डियाज़ फ़ॉरेन रिलेशन्स ड्यूरिंग द नेहरू एरा: सम स्टडीज़ (बॉम्बे: एशिया पब्लिशिंग ह ाऊस), पृष्ठ xvi, में।

64. सुरजीत मानसिंह (1984), इण्डियाज़ सर्च फॉर पावर: इंदिरा गाँधीज़ फॉरेन पॉलिसी, 1966–1982 (नई दिल्ली: सेज पब्लीकेशन), पृष्ठ 302–8।

65. इफ्तिखार गिलानी (2007), 'मनमोहन स्पीक्स ऑफ़ ट्राइसेक्टिंग कश्मीर', डेली टाइम्स, 25 अप्रैल 2007, http://www.dailytimes.com.pk/default.asp?page=2007/04/25story_25-4-2007_pgl_1 (25 अप्रैल 2005 को देखा गया); ख़ालिद हसन (2007), 'देयर इज़ अ नीड टु आइडेन्टिफाई वॉट इज़ कश्मीर: मुशर्रफ़', डेली टाइम्स (पाकिस्तान), 5 जून, http://www.dailytimes.com.pk/default.asp?page=2007\06\05\story_5-6-2007_pg7_9 (5 जून 2007 को देखा गया)।

66. कोइत्रा, 'एडवॉन्सिंग पीस प्रोसेस'।